सामुदायिक विकास

लालजी सिंह

सामुदायिक विकास

लालजी सिंह

सामुदायिक विकास

(A BOOK ON COMMUNITY DEVELOPMENT)

लालजी सिंह एम. ए.
असिस्टेंट प्रोड्यूसर योजना प्रचार, आकाशवाणी : लखनऊ

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
वाराणसी—१

A Book on Community Development
(SAMUDAYIK VIKAS)

●

[यूनेस्को के पेरिस कार्यालय के सहयोग से प्रकाशित]
Prepared with the Financial assistance of UNESCO.

●

प्रथम संस्करण
सन् : १९६४

●

मूल्य
1 रु 50 पै.

प्रकाशक	मुद्रक
ओम्प्रकाश बेरी	मगन सिंह
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय	प्रकाश प्रेस
पो. बॉ. नं. ७०, पिशाचमोचन	मध्यमेश्वर
वाराणसी–१	वाराणसी–१

पुस्तक के बारे में...

अविकसित और अर्द्धविकसित देशों के सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक पुनरुद्धार के लिए सामुदायिक विकास-योजना महत्वपूर्ण और सफल हथियार सिद्ध हुई है।

भारतवर्ष में जब स्वतन्त्रता-संग्राम छिड़ा, तब से देश की नीति आदर्श गाँव के पुर्निर्माण की ओर थी। भारतवर्ष की अधिकतम आबादी अभी भी गाँवों में ही बसती है। देश की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ के लिए यह बहुत आवश्यक हो गया था कि कोई ऐसा कार्यक्रम बनाया जाय, जिससे गाँवों की तरक्की हो। गांधीजी खुद कहा करते थे कि हिन्दुस्तान की आबादी अधिकतर गाँवों में ही है। हमारे देश की सभ्यता, संस्कृति की सही धड़कन अभी भी गाँवों में ही है। लेकिन शताब्दियों से गाँवों का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन विच्छिन्न और विशृंखल हो चुका था। भारत के गाँवों में अशिक्षा का अन्धकार और गरीबी अपने पाँव जमा चुकी थी; किन्तु भारत की स्वतन्त्रता के बाद गाँवों में फैली गरीबी और अशिक्षा का अन्धकार दूर करने के लिए सामुदायिक विकास योजना को माध्यम बनाया गया।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जन्म २ अक्तूबर, १८५२ ई० में हुआ था। उनके जन्म-दिवस के अवसर पर सन् १९५२ में ही महान् आशाओं के साथ इन कार्यक्रमों की शुरुआत की गयी। इसे शुरू हुए आज एक दशक से ऊपर हो चुका है और हिन्दुस्तान का प्रायः हर गाँव इस योजना के अन्तर्गत आ चुका है। इस योजना द्वारा भारत का प्रत्येक गाँव विकास के मार्ग पर अग्रसर है और उसमें आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवर्तन भी हुए हैं। भारतीय ग्रामीण के जनजीवन और बहुमुखी विकास की दिशा में इस योजना द्वारा महत्त्वपूर्ण सहायता मिली है।

हमारे देश के गाँव और उसकी समूची जनता एक महान् भविष्य के निर्माण की ओर इस योजना के माध्यम से रत हैं। इसमें कोई शक नहीं है कि किसी भी पीढ़ी

को इतिहास ऐसा मौका कम देता है, जो आगे आनेवाली अनन्त पीढ़ियों के सुखद भविष्य का निर्माण करे। सामुदायिक विकास योजना के माध्यम से हमारे गाँव की मौजूदा पीढ़ी को एक ऐसा ही ऐतिहासिक मौका मिला है, जिसके द्वारा वह आनेवाली अनन्त पीढ़ियों के सुखद भविष्य का निर्माण कर रही है। इस योजना द्वारा गाँवों के विकास में जनता को जो कुछ पीड़ा भी होती है, उसे वह प्रसन्नता-पूर्वक सहन करती है। वह अपने परिश्रम और अपने आँसू से भींग कर भी उसकी सफलता की कोशिश कर रही है। सामुदायिक विकास-योजना इस प्रकार देश के पुनर्निर्माण के महान् स्वप्न को, जिसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और पं० जवाहर लाल नेहरू ने देखा था, साकार करने में लगी है। इस योजना की सफलता का साक्षी तो आनेवाला इतिहास ही होगा तथा आनेवाली अगली पीढ़ियाँ होंगी।

आकाशवाणी, लखनऊ
१२-६-६४

—लालजी सिंह

अनुक्रम

—:०:—

सामुदायिक विकास

* १ *

सामुदायिक विकास कार्यक्रम द्वारा भारतवर्ष की ८० प्रतिशत जनता की, जो गाँवों में रहती है, समृद्धि और सम्पन्नता के स्वप्नों को साकार रूप देने का प्रयास हो रहा है। सामुदायिक विकास योजना गाँवों में करोड़ों लोगों की आशाओं आकांक्षाओं का केन्द्र हो गयी है। इस कार्यक्रम द्वारा भारतवर्ष के लाखों गांवों में एक नवीन चेतना तथा एक नये जागरण का संदेश पहुँचा है। यह कार्यक्रम भारतवर्ष के गाँवों में एक नवीन संस्कृति और एक नये प्रबुद्ध समाज के सृजन में सहायक सिद्ध हो रही है। इस कार्यक्रम के द्वारा भारत-वर्ष जैसे विशाल देश की धरती के हर कोनों ने नये निर्माणों में लगे हुए, नये समृद्ध सम्पन्न भारतवर्ष की रचना में लगे हुए दृढ़ कदमों के स्पंदन की अनुभूति की।

देश की स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीतिक स्वतंत्रता पाने की दिशा में छिड़े महान अभियान की समाप्ति हुई। लेकिन तत्काल बाद ही भारतवर्ष की करोड़ों जनता को आर्थिक स्वराज्य उपलब्ध होना शेष रह गया था। शताब्दियों की पराधीनता के कारण देश की अर्थव्यवस्था क्षीण हो गयी थी। उस क्षीण आर्थिक व्यवस्था के पुनः निर्माण की दिशा में स्वतंत्रता मिलने के बाद काम शुरू हो गया।

भारत जैसे विशाल देश की अर्थव्यवस्था को सुधारना या एक आत्मनिर्भर व्यवस्था का निर्माण सरल काम न था। इतनी बड़ी आबादीवाले देश की आर्थिक उन्नति का मार्ग निकालना कठिन था। लेकिन कोई न कोई मार्ग निकालना आवश्यक था। पिछड़ी तथा औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के कारण बहुत दिक्कतें भी सामने थीं। लेकिन स्वतंत्रता के महान आंदोलन ने पूरे देश में एक नवीन शक्ति भर दी थी। उसी शक्ति तथा उसी विकलता ने देश की आर्थिक व्यवस्था के पुनर्गठन के मार्ग भी प्रशस्त किये।

आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए योजना-बद्ध विकास का मार्ग चुना गया। क्योंकि सीमित प्राकृतिक तथा आर्थिक साधनों के नियोजन द्वारा विकास कार्यों की सफलता पर अधिक विश्वास किया गया। साथ ही पंचवर्षीय योजना के माध्यम से देश के सभी वर्गों के आर्थिक जीवन के पुनर्गठन का प्रयास शुरू हुआ। कोशिश यह की गयी कि पंचवर्षीय योजना के द्वारा देश के हर व्यक्ति के जीवन-स्तर को ऊँचा किया जाये। इतना ही नहीं, १९५४ में भारतीय संसद ने समाजवादी समाज के निर्माण की घोषणा कर दी और कोशिश यह शुरू हुई कि गरीब और अमीर की खाईं कम की जाये। सभी को समान रूप से सामाजिक न्याय मिले। साथ ही देश के हर नागरिक को उसके व्यक्तित्व के विकास का उपयुक्त अवसर मिले। उत्पादन के साधनों का नियंत्रण भी इस प्रकार शुरू

हुआ कि देश की अर्थव्यवस्था पर कुछ खास लोगों का नियंत्रण ही न रह जाये।

सम्पूर्ण देश के विकास की इस पंचवर्षीय योजना में ग्रामों के आर्थिक पुनर्गठन को भी पर्याप्त महत्त्व दिया गया। क्योंकि भारतवर्ष की ८० प्रतिशत आबादी गाँवों में ही बसती है। अब भी भारतीय संस्कृति की आत्मा की धड़कन भारतीय गाँवों में मिलती है। भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के महान नेता महात्मा गांधी कहा करते थे कि हमारे देश की सच्ची आत्मा तो गाँवों में ही है। इतना ही नहीं, जब से गांधी जी के हाथों में स्वतंत्रता के आन्दोलन का संचालन आया तभी से उन्होंने गाँवों को पुनर्जीवित करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम भी शुरू किये। उनका यह विश्वास था कि स्वतंत्रता के संघर्ष के लिए गाँववालों को प्रेरित करने के साथ ही उन्हें आर्थिक उत्थान के नये मार्ग भी बताये जायँ।

पिछड़ी तथा औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के कारण भारत के गाँवों की आर्थिक दशा जर्जरित हो गयी थी। किसानों पर ऋण का भयंकर बोझ था। इसके साथ ही पराधीनता के कारण उनके हाथ-पाँव बँध से गये थे। कृषिप्रधान देश होने पर भी कृषि की वे सुविधाएँ गाँवों में न थीं जिनसे किसान किसी भी प्रकार आगे बढ़ सके भयंकर बेरोजगारी थी। किसानों के पास कृषि के कार्यों के

बाद बहुत वक्त खाली बचता था। इस प्रकार देश के गाँव गिरते चले जा रहे थे।

लेकिन महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों से ग्रामीण तथा लघु उद्योगों की स्थापना गाँवों में स्वतंत्रता-आंदोलन के समय में ही शुरू हो गयी। गांधी जी ने अपने आश्रमों की स्थापना गाँवों में की। गाँववालों को खाली समय में काम करने के लिए चर्खा द्वारा सूत कातने तथा अन्य हस्त उद्योगों का प्रचार भी गाँवों में किया गया। इस प्रकार स्वतंत्रता-आंदोलन के संदेशों के साथ-साथ भारतीय गाँवों में भावी आर्थिक समृद्धि के स्वप्नों को साकार रूप देनेवाली योजनाओं के बीज भी अंकुरित हुए।

पंचवर्षीय योजना का जब निर्माण किया गया तो गाँवों के उत्थान के प्रश्न को प्राथमिकता दी गयी। भारत के कृषिप्रधान देश होने के कारण कृषि की उन्नति पर बहुत अधिक बल दिया गया। औद्योगिक विकास के कार्यक्रमों को भी चलाने के लिए कृषि की उपज को बढ़ाना बहुत आवश्यक हो गया। वैसे भारतीय अर्थ-व्यवस्था का आधार ही कृषि है। देश की सर्वाधिक आबादी का रोजगार या पेशा कृषि ही है।

इसलिए गाँवों के चतुर्दिक उत्थान की समस्या को ध्यान में रखते हुए सामुदायिक विकास योजना का प्रारम्भ किया गया। महात्मा गांधी के जन्मदिवस २ अक्तूबर १९५२ से इस योजना का कार्य शुरू हुआ।

पहली पंचवर्षीय योजना में ग्राम विस्तार को उस साधन और सामुदायिक विकास के उस अभिकरण की संज्ञा दी गयी जिसके द्वारा ग्रामों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में क्रांति का सूत्रपात होता। सामुदायिक विकास के विस्तार द्वारा ऐसे अभिकरण की व्यवस्था और विकास के ऐसे कार्यक्रमों को अपनाया गया जिनसे ग्रामीण जनता में सामुदायिक दृष्टिकोण विकसित हो, साथ ही ऐसे उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकारी तथा गैरसरकारी कार्यकर्त्ता एक साथ प्रगति की दिशा में कार्यरत हो सकें। प्रारम्भिक प्रेरणा और गति प्राप्त करते ही यह कार्यक्रम पर्याप्त बढ़ने लगा। इस कार्यक्रम की प्रगति जिस प्रकार हुई उसी प्रकार निरन्तर इसकी उपादेयता बढ़ती गयी तथा इसमें अनेक नये कार्यक्रम भी सम्मिलित किये जाने लगे।

सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय प्रसार कार्यक्रम की कार्यरत इकाई विकास खण्ड है। इस विकास खण्ड में औसत रूप से १०० गाँव होते हैं जिनकी औसत आबादी ६६ हजार की होती है। एक विकास खण्ड का औसत प्रसार १५० से १७० वर्ग मील तक होता है। तीसरी पंचवर्षीय योजना के शुरुआत में हमारे देश में ५ लाख ५७ हजार गाँव इस योजना के अन्तर्गत आ चुके हैं। देश में ५२०० विकास खण्डों की स्थापना हो चुकी है। तीसरी योजना के मध्य १९६३ तक देश के सभी गाँव इस योजना के अन्तर्गत आ जायेंगे।

पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में सामुदायिक विकास

कार्यक्रम में मुख्यतः कृषि, पशुपालन, सिंचाई, शिक्षा, समाज-शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता और संचार आदि के क्षेत्रों में पर्याप्त सफलता मिली। लेकिन पहली योजना की कमियों को ध्यान में रखते हुए दूसरी पंचवर्षीय योजना जो १९५६ में शुरू हुई, उसमें पिछले अनुभवों के आधार पर जिन क्षेत्रों में कार्यों पर विशेष बल दिया गया वे निम्नलिखित हैं :

१—देहातों में रोजगार की सम्भावनाओं की अभिवृद्धि करना। साथ ही ग्रामीणों की अतिरिक्त आय के लिए कृषि के अलावे ग्रामोद्योग और छोटे उद्योगों के विकास की दिशा में प्रयत्नशील रहना।

२—सहकारी गतिविधियों का विकास।

३—महिलाओं और युवकों में इस कार्यक्रम के प्रति रुचि पैदा करने में तीव्रता लाना शीघ्र

४—आदिवासी क्षेत्रों में तीव्रता से कार्य करना।

इन सभी दिशाओं में सामुदायिक विकास योजना ने कदम बढ़ाये। ५५ विकास क्षेत्रों के साथ इस विशाल देश में सामुदायिक विकास के कार्यक्रम की शुरुआत हुई। किन्तु इसकी बढ़ती आवश्यकता के कारण १९६२-६३ के वर्ष में यानी १० वर्षों की अवधि में विकास खण्डों की संख्या ५५ से बढ़कर ५२०० हो गयी।

इस प्रकार पूरे भारतवर्ष के ग्रामीण जनता के उत्थान के स्वप्नों को साकार करने का प्रयास सामुदायिक विकास योजना के माध्यम

से किया जा रहा है। सामुदायिक विकास योजना के जरिये क्या कृषि, क्या सहकारिता, क्या शिक्षा सभी के प्रसार में महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है। सामुदायिक विकास योजना का मूल दूरगामी लक्ष्य केवल उत्पादन बढ़ाना या देश की समृद्धि ही नहीं है बल्कि इसके द्वारा एक नये लोकचित्त का निर्माण भी हो रहा है। एक सांस्कृतिक क्रांति धीरे-धीरे सामुदायिक विकास योजना के द्वारा होनेवाली है। क्योंकि जिस प्रकार परस्पर मिल-जुल आगे बढ़ने की भावना का बीजारोपण हमारे देश के गाँवों में हुआ है उससे परस्पर सहयोग और सद्भाव, सहिष्णुता की भावनाएँ भी बढ़ी हैं। इस प्रकार यह बड़ी आसानी से कहा जा सकता है कि सामुदायिक विकास योजना द्वारा ग्रामीण जीवन के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों में बड़ा परिवर्तन आया है। सामुदायिक विकास के क्रमिक विकास तथा उचित संचालन के लिए प्रशासन का भी एक नया प्रारूप तैयार किया गया। इस योजना के अन्तर्गत चलनेवाले विकास क्षेत्रों में, एक विकास-क्षेत्र अधिकारी होता है। विकास क्षेत्र अधिकारी की सहायता के लिए विभिन्न कार्यक्रमों से सम्बन्धित सहायक विकास अधिकारियों की भी व्यवस्था है। कृषि, उद्योग, शिक्षा, महिला, पंचायती-राज, सहकारिता, सभी विषयों से सम्बन्धित अलग-अलग सहायक विकास-अधिकारी होते हैं। सभी गाँवों के लिए ग्राम-सेवकों तथा ग्राम-सेविकाओं की नियुक्ति होती है। ग्राम-सेवक कृषि तथा अन्य कृषि संबंधी

कृषक की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथा किसानों को कृषि की नवीन तथा वैज्ञानिक विधियों से परिचित कराता है।

सामुदायिक विकास के प्रशासन की यह व्यवस्था तो विकास क्षेत्र के स्तर पर है। लेकिन सामुदायिक विकास योजना के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए केन्द्र तथा राज्य स्तर पर इसके लिए अलग मंत्रालयों की स्थापना की गयी है। मंत्रालय विकास आयुक्त की सहायता से चलते हैं। विकास आयुक्त के कार्यालय में उपविकास आयुक्त भी होते हैं जो सामुदायिक विकास योजना की विभिन्न गतियों की देख-भाल तथा उसकी प्रगति के लिए लगातार सचेष्ट रहते हैं।

प्रारम्भ में इस विशाल योजना के संचालन के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी थी। किसी भी योजना की सफलता के लिए यह बहुत आवश्यक होता है कि ऐसे लोग भी हों जो इन कार्यों को विकास के साथ आगे बढ़ा सकें। इस दृष्टि से सामुदायिक विकास से सम्बन्धित सभी पक्षों के लिए प्रशिक्षण की योजना भी चलाई गयी। प्रशिक्षण योजना में सरकारी कर्मचारियों को ही नहीं वरन् सार्वजनिक कार्यकर्ताओं तथा स्वयंसेवी-संस्थाओं के प्रतिनिधियों को भी प्रशिक्षित करने की व्यवस्था की गयी ताकि सामुदायिक विकास योजना की तेज प्रगति में किसी भी प्रकार की बाधा न आये।

सामुदायिक विकास और कृषि

* २ *

सामुदायिक विकास योजना के मूल उद्देश्यों में कृषि उत्पादन को बढ़ाना बहुत महत्त्वपूर्ण है। भारतवर्ष को स्वतंत्रता के बाद खाद्यान्नों की दिशा में आत्मनिर्भर बनाना बहुत जरूरी हो गया। हमारा देश शुरू से ही कृषि-प्रधान रहा है। हमारे देश की सबसे अधिक आबादी गाँवों में ही रहती है, उसका मूल पेशा खेती-बारी है। इसलिए देश की आर्थिक स्थिति का दारोमदार ही कृषि की उन्नति पर आधारित है।

अर्द्धविकसित तथा औपनिवेशिक देश होने के कारण हमारे देश के किसानों की आर्थिक दशा लगातार गिरती गयी। पुराने अंध-विश्वासों और रूढ़ियों के कारण एक तो वे किसी भी नयी हवा को नहीं अपना पाये थे तथा गुलामी के कारण भी उनकी अपनी दिक्कतें और परेशानियाँ थीं। कायदे से गाँवों में सिंचाई के साधन नहीं थे। इसी प्रकार न अच्छा बीज न जानवरों के लिए उपयुक्त चारा, न खेती-बारी की उन्नत अन्य देशों में प्रचलित विधियों का ही उन्हें ज्ञान था। साथ ही अच्छी खाद, पांस भी न मिल पाती थी। इन सबका फल यह हुआ कि खेती-बारी का रोजगार बहुत घाटे का हो गया। जो किसान खेती-बारी के पेशे में थे उन पर ऋण का बोझ बढ़ता ही गया। भूमि की भी समस्या कठिन थी। खेतों के छोटे और छिटके होने के कारण किसान को खेती-बारी में और दिक्कत होती थी।

स्वतंत्रता मिलने के बाद देश को आर्थिक समृद्धि की दिशा में ले जाने के लिए खेती-बारी की तरक्की की ओर ध्यान देना आवश्यक हो गया था। विदेशों से अनाज मंगाना पड़ता था। इस प्रकार बहुत सा धन विदेशों को चला जाता था। इसलिए सामुदायिक विकास की योजना जब गाँवों के उत्थान तथा पुनर्निर्माण के लिए बनायी गयी तो उसमें कृषि उत्पादन को प्राथमिकता दी गयी।

कृषि उत्पादन का महत्त्व इसलिए भी स्वीकार किया गया कि देश के औद्योगिक विकास के लिए भी कृषि के उत्पादन की वृद्धि करना आवश्यक था। कोई भी देश तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक औद्योगिक उत्पादन की दिशा में देश को आत्मनिर्भर न बनाया जाय। लेकिन लगातार नये खुलनेवाले कारखानों को चलाने के लिए कच्चे माल की आवश्यकता पड़ती है। लगातार पड़नेवाली कच्चे माल की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कृषि के उत्पादन को भी लगातार बढ़ाना जरूरी है।

सामुदायिक विकास संगठन के द्वारा जो सबसे महत्त्वपूर्ण काम किया जाता है वह यह है कि कृषि की उन्नत तथा वैज्ञानिक विधियों से किसानों को परिचित कराया जा रहा है। इतना ही नहीं उन्नत बीज तथा किस समय पर रासायनिक खादों का उपयोग किस मात्रा में किया जाय इस संदेश को भी किसानों तक पहुंचाया जा रहा है। असल में रासायनिक खादों के प्रयोग के लिए सावधानी बरतनी पड़ती है।

ठीक समय पर ठीक मात्रा में फसलों के लिए यदि रासायनिक खादें न दी गईं तो इससे लाभ के बजाय नुकसान भी होता है। फसलों की बोवाई, निकाई, गुड़ाई कब और कैसे की जाये इसे भी किसानों को बताया जाता है। खादों का इस्तेमाल गाँवों में बराबर बढ़ रहा है। सामुदायिक विकास योजना के प्रसार से यह लाभ हुआ है कि किसान अब आधुनिक तथा वैज्ञानिक विधियों को अपनाने लगे हैं। इतना ही नहीं, इन आधुनिक और कृषि की वैज्ञानिक विधियों के प्रसार और प्रचार के लिए प्रदर्शन भी कराये जाते हैं ताकि किसान सरलता से नई और वैज्ञानिक विधियों को समझ और सीख सकें।

कृषि की उन्नति के लिए, हमारे देश में अनेक आधुनिक तथा वैज्ञानिक विधियों पर जोर दिया जा रहा है। देश में कृषि सम्बन्धी अनुसंधानशालाएँ बनाई गयी हैं। जहाँ विश्व में प्रचलित कृषि की उन्नत तथा आधुनिक विधियों के सम्बन्ध में इस दृष्टि से अनुसंधान होता रहता है कि हमारे देश की भूमि तथा जलवायु एवं उपलब्ध साधनों द्वारा कृषि की उपज कैसे बढ़ाई जा सकती है। अनुसन्धान के परिणाम को सामुदायिक विकास संगठन के द्वारा फिर गाँव-गाँव में प्रचारित किया जाता है। ताकि खेतिहर और किसान इससे सरलता से लाभ उठा सकें।

इतना ही नहीं, देश में कृषि की तरक्की, उसके अनुसंधान तथा अध्ययन और मनन के लिए कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना पर

भी जोर दिया जा रहा है। उत्तरप्रदेश के नैनीताल जिले में ,रुद्रपुर में एक कृषि विश्वविद्यालय की भी स्थापना की गयी, ताकि किसानों के लड़के इस विश्वविद्यालय में कृषि सम्बन्धी ऊँची शिक्षा पायें तथा फिर गाँवों में लौट कर कृषि की पुरानी पद्धति में आमूल परिवर्तन करें ताकि देश की समृद्धि में सहायता मिल सके। इसी प्रकार देश के अन्य भागों में भी कृषि-विश्वविद्यालयों के निर्माण की योजना बनाई गयी है।

कृषि के लिए खाद, बीज, यन्त्र तथा समुचित सिंचाई के साधनों की भी आवश्यकता होती है। स्वतन्त्रता के पूर्व हमारे देशों में सिंचाई के बहुत सीमित साधन थे। किसान को प्रायः बादलों की वर्षा का ही सहारा था। इस प्रकार कभी अगर अधिक पानी बरस गया तो भी फसलें खराब हो जाती थीं तो कभी सूखा पड़ जाता था। इस प्रकार किसान का कठिन-से-कठिन परिश्रम व्यर्थ चला जाता था। लेकिन सिंचाई की समस्या को हल करने के लिए नदियों पर बड़े बाँधों के निर्माण की व्यवस्था की गयी। पुराने जमाने के बाँधों का विकास किया गया तथा देश भर में विशाल बाँध बाँधे गये। इन बाँधों को बाँध कर नहरें निकाली गयीं। इन विशाल बाँधों में भाखरा नांगल (पंजाब), हीराकुंड (उत्कल), नागार्जुन सागर (राजस्थान), दामोदर घाटी (बिहार), तुंगभद्रा (आंध्र), मयूराक्षी (बंगाल), नौगढ़, चन्द्रप्रभा (उत्तर प्रदेश) मुख्य हैं। इन बाँधों से नहरों के अलावा बिजली भी

सामुदायिक विकास--

फसलें, जिन्हें देख कर किसान का मन भविष्य के प्रति नयी आस्था और विश्वास से भर जाता है।

सामुदायिक विकास—
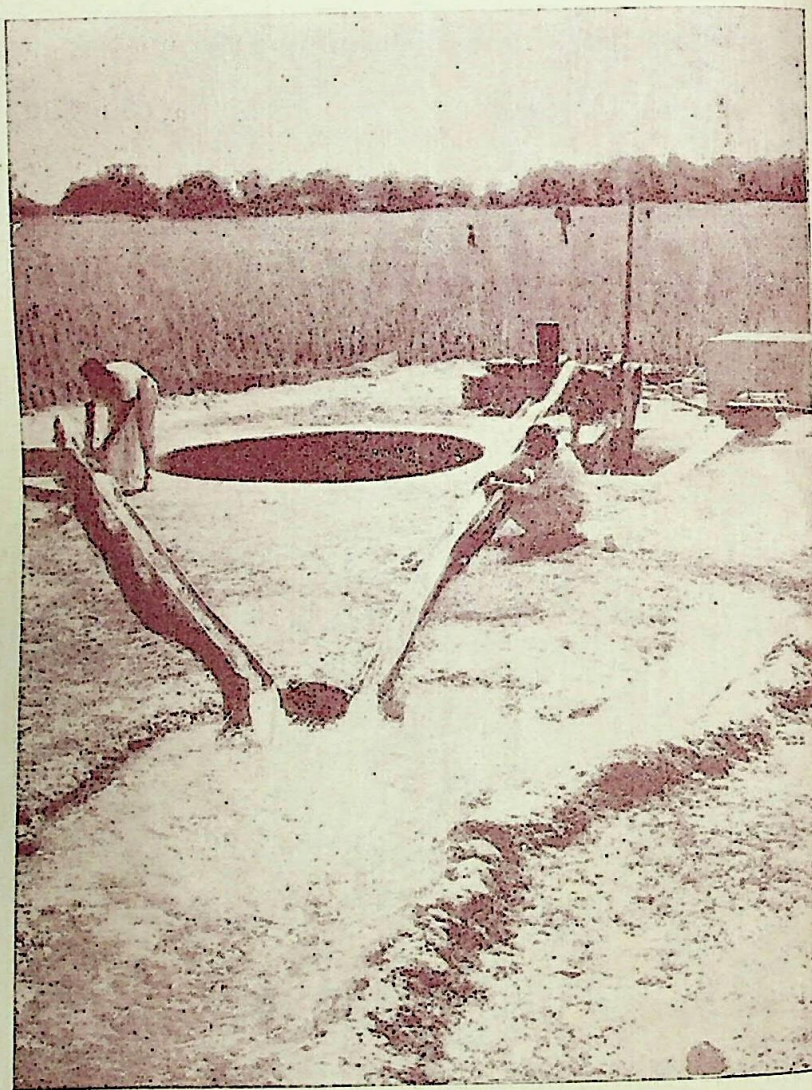
सिंचाई-सुविधाएँ

★

निकाली जायगी। इस प्रकार विज्ञान की सहायता से नदियों के व्यर्थ बह जानेवाली प्राकृतिक शक्ति का भी योजना के माध्यम से सदुपयोग किया गया।

हमारा देश इन दिनों तीसरी योजना के दौर से गुजर रहा है। पहिली पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सिंचाई साधनों की वृद्धि पर लगभग ३७० करोड़ रुपया देश भर में व्यय किया गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में सिंचाई के साधनों को बढ़ाने के लिए लगभग ३७० करोड़ रुपये व्यय किए। तीसरी पंचवर्षीय योजना में सिंचाई तथा बाढ़ नियन्त्रण दोनों पर मिलाकर सब ६६१ करोड़ रुपये के व्यय की सम्भावना है। जिसमें से ४३६ करोड़ रुपया केवल सिंचाई के साधनों के बढ़ाने के लिए खर्च किया जायेगा। इन योजनाओं के आधार पर पूरे देश में लगभग ११० करोड़ ६५ लाख एकड़ भूमि के लिए सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध हो सकेंगी।

सिंचाई के साथ-साथ बाढ़ नियन्त्रण योजनाओं पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। बाढ़ों की वजह से गाँवों का बड़ा अहित होता था। पूरी की पूरी फसलें बर्बाद हो जाती थीं। बस्तियाँ बह जाती थीं। इस प्रकार बाढ़ों से गाँवों में प्रायः प्रतिवर्ष महाविनाशकारी दृश्यों को देखना पड़ता था। तीसरी योजना में बाढ़ नियन्त्रण के लिए लगभग पूरे देश में ६१ करोड़ रुपये का व्यय होगा। बाढ़ नियन्त्रण में थोड़ी बहुत सहायता तो बाँधों के निर्माण से भी मिली

है। लेकिन गाँवों को बाढ़ों से बचाये रखने के लिए उनकी सतह ऊँची की जा रही है। पानी के बहाव का भी नियन्त्रण किया जा रहा है। इस प्रकार गाँवों को बाढ़ से भी रक्षित करने का प्रयास तेजी से किया जा रहा है। इन प्रयासों को संचालित करने में जिस जन-सहयोग की अपेक्षा होती है उसे सामुदायिक विकास के संगठन के द्वारा पूरा किया जाता है।

तीसरी योजना में छोटी सिंचाई की योजनाओं पर अधिक ध्यान दिया गया। क्योंकि सीमित साधनों के कारण हर क्षेत्र में बाँधों और नहरों द्वारा पानी नहीं पहुँच सकता था। इसलिए छोटी सिंचाई योजनाओं को विकसित करने की ओर भी ध्यान दिया गया। पुराने सिंचाई के साधनों के नवीनीकरण की योजना बनायी गयी। इस योजना के संचालन का भी पूरा भार सामुदायिक विकास संगठन द्वारा विकास क्षेत्रों पर ही सौंपा गया। तीसरी योजना की अवधि में लगभग २५० करोड़ रुपये छोटी सिंचाई योजनाओं के विकास के लिए पूरे देश पर व्यय करने का निश्चय किया गया। छोटी सिंचाई योजनाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनसे बहुत थोड़े समय में ही लाभ उठाया जा सकता है जबकि बड़ी योजनाओं के पूरा होने में बहुत समय तथा बहुत धन दोनों लगता है तथा फल जल्दी नहीं मिलता। दूसरी ओर छोटी सिंचाई योजनाएँ तत्काल लाभ पहुँचाने लगती हैं। छोटी सिंचाई योजनाओं की सफलता को इस दृष्टि से भी आँका जा सकता है कि इसकी सफलता के लिए स्थानीय साधन

जैसे धन व श्रम भी उपलब्ध किया जा सकता है। अनुमान लगाया गया है कि देश भर में ७५० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई केवल छोटी सिंचाई योजनाओं के माध्यम से किया जा सकता है।

पिछले वर्षों यानी पहिली पंचवर्षीय योजना के बाद कृषि का उत्पादन १७ प्रतिशत अधिक हुआ। दूसरी योजना के अंतर्गत, पहिले दो-तीन वर्षों के मौसम की खराबी के बावजूद भी १६ प्रतिशत कृषि उत्पादन बढ़ा। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में कृषि उत्पादन के वृद्धि की योजनाओं तथा सामुदायिक विकास दोनों पर ५२६ करोड़ रुपये के लगभग व्यय किये गये।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि-सम्बन्धी उत्पादन को बढ़ाने के प्रयासों में ही तीव्रता लाने पर अधिक जोर दिया गया। कोशिश यह शुरू की गयी कि आर्थिक साधनों की कमी से खेती-बारी का काम जरा भी पीछे न पड़ने पाये। रासायनिक उर्वरकों को भी अधिक से अधिक मात्रा में उपलब्ध करने की कोशिश की गयी। कृषि उत्पादन को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए कृषि सम्बन्धी विभिन्न सरकारी तथा गैरसरकारी संगठनों को अधिक से अधिक परस्पर मिल-जुलकर काम करने पर बल दिया गया। सहकारी संस्थाओं के माध्यम से ऋण की सुविधाओं को उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया।

इस अवधि में प्रयास यह हुआ कि जितनी भी राजकीय इकाइयों द्वारा तकनीकी तथा अन्य सहायताएँ कृषकों को मिल सकती हैं

वे सभी ठीक समय पर तथा ठीक स्थान पर ही उपलब्ध हो जायँ। इसके साथ राज्य के कृषि विभाग द्वारा सभी उपलब्ध सुविधाएं प्रशिक्षित व्यक्ति, सामुदायिक विकास की कार्यरत इकाई, विकास क्षेत्रों को दी गयीं ताकि तात्कालिक आवश्यकताओं की सरलता से पूर्ति हो सके।

तीसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में कृषि के उत्पादन योजना पर जिसमें सिंचाई, भूमि संरक्षण तथा सहकारिता शामिल है, सब मिलाकर १२८१ करोड़ रुपये का व्यय निश्चित किया गया। तीसरी योजना में कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए स्थानीय आवश्यकताओं को बहुत ध्यान में रखा गया। तीसरी योजना में कोशिश यह की गयी कि गाँव-पंचायतें तथा परिवार अपनी-अपनी अलग-अलग उत्पादन योजना तैयार करें। इसका अर्थ यह था कि हर गाँव-पंचायत तथा हर परिवार को यह ज्ञात हो जाये कि उसे अपने उत्पादन को बढ़ाने के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता पड़ेगी। तथा इसी के आधार पर विकास क्षेत्र, जिले तथा राज्य की योजनाएँ आधारित होंगी।

कृषि उत्पादन को बढ़ाने की जिन दिशाओं में विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता पड़ी वे ये हैं :—(१) सिंचाई, (२) भूमि संरक्षण, (३) बीज वितरण, (४) रासायनिक खादों तथा हरी खादों व कम्पोस्ट की खादें, (५) सुधरे हल तथा अन्य उन्नत कृषि-यंत्र व कृषि की वैज्ञानिक विधियाँ। इन सभी दिशाओं में गाँवों में

पर्याप्त प्रगति हो रही है। सुधरे कृषि यंत्रों तथा आधुनिक व वैज्ञानिक विधियों के प्रचार व प्रसार में सामुदायिक विकास के कार्यकर्ता महत्त्वपूर्ण योग दे रहे हैं। उन्नत कृषि यंत्रों को उपलब्ध कराने के लिए आर्थिक सहायता भी कृषकों को सामुदायिक विकास के माध्यम से दी जा रही है। इतना ही नहीं, सहकारी संस्थाएँ भी इस काम में पर्याप्त सहायक हो रही हैं। उन्नत व सुधरे बीजों को उपलब्ध कराने के लिए सभी विकास क्षेत्रों में बीज भंडारों की स्थापना की गयी है। इन बीज भंडारों पर किसानों को सरलता से उन्नत बीज भी मिल जाता है। इसी प्रकार रासायनिक खादों के समुचित वितरण की भी व्यवस्था की गयी है। दूसरी योजना के अंत तक ५५० लाख एकड़ भूमि की खेती के लिए उन्नत बीज की व्यवस्था की गयी। तीसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक यानी १९६५-६६ तक १४८० एकड़ भूमि की खेती के लिए उन्नत बीज उपलब्ध हो जायेंगे। कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए उन्नत बीज से बड़ी सहायता मिलती है। निरोग, सुडौल, तथा अच्छे बीजों को बोने से फसल में रोग और कीड़े भी कम लगते हैं। पौधे स्वस्थ होते हैं जिनसे अच्छी उपज मिलती है। तीसरी योजना में बीज की खेती भी अलग से की जायेगी। साथ ही हर विकास क्षेत्र में अलग बीज-गोदाम बनाये जायँगे।

फसलों को बहुत अधिक क्षति कीड़ों-मकोड़ों, रोगों व जानवरों

से भी पहुँचती है। फसलों का इस प्रकार बहुत नुक्सान हो जाता है। उपज घटती है। इस दृष्टि से हर प्रदेश में कृषि-रक्षा सेवा केन्द्रों की स्थापना हुई। हर जिलों में इसके केन्द्र एवं उपकेन्द्र बनाये गय। आवश्यकता पड़ने पर तथा सूचना देने पर कृषि-रक्षा सेवा केन्द्र की सुविधाएँ मिल जाती हैं। पौधों के बहुत से रोग ऐसे होते हैं जिनको हर किसान नहीं जानता। साथ ही इस वैज्ञानिक शोध और अनुसंधान के युग में, अब अनेक नई दवाएँ और नये तरीके भी निकल गये हैं जिनसे किसान पूरी तरह परिचित नहीं हैं। इसलिए कृषि-रक्षा सेवा केन्द्रों पर जानकार तथा प्रशिक्षित कर्मचारी रहते हैं। जिनके पास नई से नई खोज की हुई दवाएँ रहती हैं। इनकी सहायता से कृषि उत्पादन को बढ़ाने में बड़ी सहायता मिल रही है।

पहली और दूसरी योजना की अवधि में उन्नत तथा आधुनिक कृषि यन्त्रों के विकास पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। हमारे देश के किसानों के पास अब भी कृषि के पुराने यन्त्र ही हैं। किसानों की अधिक संख्या के पास तो इतना धन भी नहीं है कि वे इन सुधरे तथा आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग कर सकें। लेकिन कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि निराई, गुड़ाई, बोवाई या मंड़ाई आदि सभी अवसरों पर काम आनेवाले पुराने औजारों की जगह ऐसे सुधरे औजारों का इस्तेमाल किया जाये जिनसे कृषि की तरक्की हो सके तथा खेती-बारी सम्बन्धी काम सरलता से तथा कम समय में

हो सके। पुराने यंत्रों के निर्माण से खेती-बारी की तरक्की में बाधा पहुँच रही है। इसलिए तीसरी योजना में सुधरे हुए तथा उन्नतशील कृषि यंत्रों के निर्माण पर भी विशेष ध्यान दिया गया। तीसरी योजना में इस बात पर विशेष ध्यान दिया गया कि खेती-बारी के काम आने-वाले विभिन्न प्रकार के औजारों के लिए जिस प्रकार के लोहे तथा इस्पात की आवश्यकता हो उसे उपलब्ध किया जाये। प्रति वर्ष कृषि उत्पादन योजना के आधार पर किन कृषि यंत्रों की आवश्यकता पड़ेगी तथा उनका वितरण किस प्रकार होगा इसका उत्पादन योजना के तैयार होने के पहिले ही लेखा-जोखा तैयार कर लेने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया। यंत्रों की मरम्मत तथा उनके रख-रखाव पर जो व्यय होगा उसका लेखा अलग तैयार करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

कौन से कृषि यंत्र किस राज्य के लिए तथा किस प्रकार की खेती-बारी के लिए होंगे इसके निश्चय का दायित्व विशेषज्ञों पर छोड़ा गया। सुधरे हुए औजारों के प्रयोग के लिए देश के चार क्षेत्रों में केन्द्रीय कृषि अनुसंधानशाला की ओर से चार अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना की गयी। इस प्रकार के अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना अब सभी राज्यों में हो रही है। साथ ही जिलों में भी सुधरे औजारों के केन्द्र बनेंगे।

कृषकों को भी सुधरे औजारों के इस्तेमाल के सम्बन्ध में प्रशि-क्षित करने की व्यवस्था की गयी। विकास क्षेत्रों में इन सुधरे हुए

औजारों के इस्तेमाल करने की विधियों का प्रदर्शन भी कराया जाता है, ताकि किसान आसानी से इन औजारों के प्रयोग के तरीकों से परिचित हो सकें। कृषि यंत्र महँगे पड़ते हैं। हमारे देश के गाँवों की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है कि किसान इन कृषि-यंत्रों को सरलता से खरीद सकें। इसलिए किसानों को कृषि यन्त्रों की खरीद के लिए सहकारी समितियों द्वारा ऋण या राजकीय ऋण, अनुदान या तकावी की भी व्यवस्था की गयी। सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत सभी गाँवों में ग्रामसेवक किसानों को खेती-बारी के कामों में सहायता देने के लिए नियुक्त हैं। इन ग्रामसेवकों को भी इन सुधरे औजारों के इस्तेमाल के सम्बन्ध में प्रशिक्षित किया जाता है ताकि वे अपने गाँवों में जाकर किसानों को आधुनिक कृषि यंत्रों के इस्तेमाल के सम्बन्ध में पूरी जानकारी दें सकें। देश के २५ ग्राम-विकास प्रशिक्षण केन्द्रों पर यह व्यवस्था की गयी है। कृषि यंत्रों से सम्बन्धित योजना पर तीसरी पंचवर्षीय योजना में ८ करोड़ रुपयों के व्यय की व्यवस्था है।

इन सभी उपायों तथा सामुदायिक विकास योजना के जरिये मिलनेवाले जनसहयोग से तीसरी योजना के अन्तर्गत यानी ५ वर्षों की अवधि में ३० प्रतिशत कृषि के उत्पादन में वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है।

इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए बहुत-सी भूमि जो उपजाऊ नहीं है या बंजर है उसे भी उपजाऊ और कृषि योग्य बनाने का प्रयास किया

सामुदायिक विकास——

उन्नत विधि से बोआई

बोआई
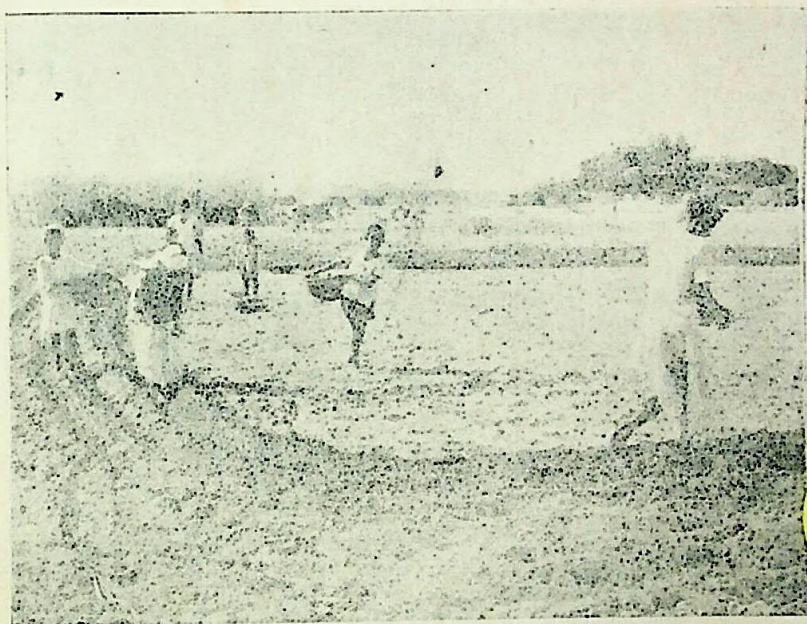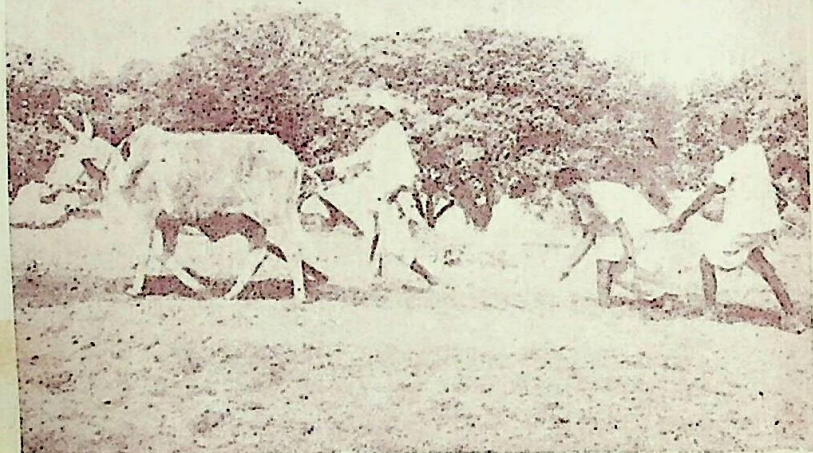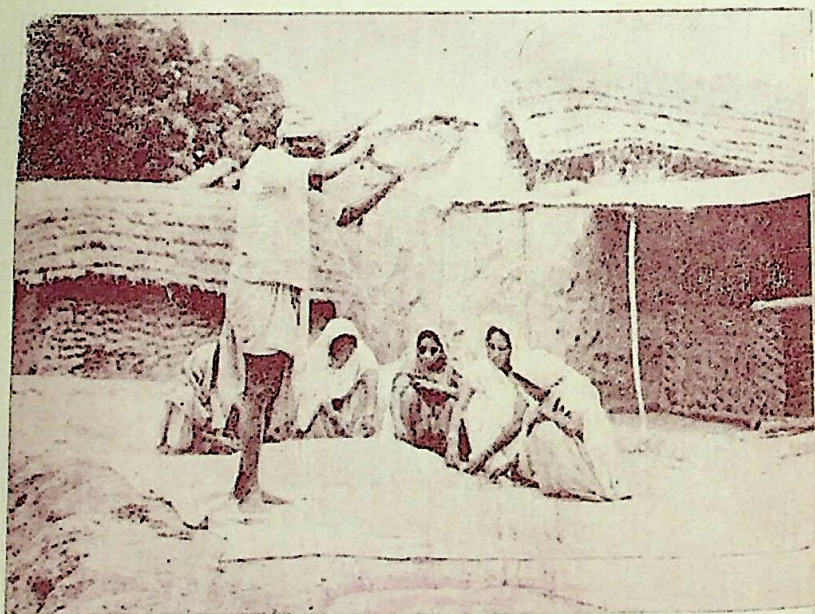
ओसाई

जा रही है। जितनी भूमि में खेती होती है उसका रक़बा तीसरी योजना में ३२७० से ३३५० एकड़ हो जायेगा।

कृषि कार्यक्रम में ऐसी फसलों के उत्पादन पर अधिक जोर दिया गया है जिनसे किसान अच्छी आय कर सके तथा जिससे उद्योग-धंधों के लिए पर्याप्त मात्रा में कच्चे माल की भी उपलब्धि हो सके। चीनी बनाने के लिए ईख का उत्पादन तो योजनाओं के नियत लक्ष्य से भी आगे जा चुका है। कपास, जूट और तिलहन की खेती के विकास पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इन फसलों के लिए आवश्यक रासायनिक खाद, सिंचाई तथा उचित औंजारों को उपलब्ध कराने पर बहुत अधिक जोर दिया जा रहा है। इनके उत्पादन के बढ़ने से हमारा देश इनका निर्यात कर सकेगा या हमारे देश को कम से कम इनका आयात नहीं करना पड़ेगा। मैसूर, गुजरात, केरल तथा महाराष्ट्र के समुद्री तट पर होनेवाली कपास की खेती के विकास पर विशेष ध्यान तीसरी योजना की अवधि में दिया जा रहा है। तीसरी योजना के अन्त तक कपास की खेती ३ लाख एकड़ में होने लगेगी जबकि वह २०००० एकड़ में होती थी। तम्बाकू की उन्नत जातियों की बोआई पर जोर दिया जायगा क्योंकि विदेशों में इसकी अधिक माँग है। काजू की खेती का क्षेत्र भी तीसरी योजना में बढ़कर ३ लाख एकड़ हो जायेगा। इसी प्रकार फलों और सब्जियों के उत्पादन को बढ़ाने की ओर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। क्योंकि इस प्रकार किसान अपनी आय को बढ़ा सकता है तथा अपनी आर्थिक अवस्था को ऊँचा उठा सकता है। शहरों के पास बसे गाँवों में सब्जी की खेती को प्रोत्साहन मिलने से किसानों की आय जल्द ही बढ़ सकती है।

उत्पादन के बाद किसानों को खाद्यान्नों की बिक्री के लिए उचित बाजार की भी आवश्यकता पड़ती है। क्योंकि अक्सर यह होता है कि किसानों को अपने उत्पादन पर अच्छा मूल्य नहीं मिलता। जल्दी में वे सस्ते दाम पर अनाजों की बिक्री कर देते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए सहकारी क्रय-विक्रय समितियों का भी गठन किया गया। साथ ही नियमित बाजारों की भी व्यवस्था की गयी जहाँ नियन्त्रित मूल्य पर ही अनाजों का क्रय किया जा सकता है।

अन्न भण्डार की व्यवस्था भी इसी दृष्टि से की गयी ताकि बाजारों में किसान को यदि उचित मूल्य नहीं मिलता तो वह उसे अनाज-भण्डार में जमा कर दे। जब भी उसे उचित मूल्य मिले तभी वह बिक्री करे।

कृषि उत्पादन की वृद्धि के लिए अनुसंधान कार्यों पर लगातार बल दिया जा रहा है। देश के कोने-कोने में कृषि के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित अनुसन्धानशालाएँ खुली हुई हैं। इनमें हर फसलों के विकास से सम्बन्धित विषयों पर अनुसन्धान होता रहता है। अनुसन्धान-योजना पर २८ करोड़ रुपया खर्च किया जायेगा।

कृषि उत्पादन को बढ़ाने की दिशा में इन दिनों हर किसान अपनी पूरी शक्ति, पूरे साधनों और उपलब्ध ज्ञान से सचेष्ट है। क्योंकि हमारे देश की अर्थव्यवस्था का सारा दारोमदार कृषि की उन्नति पर ही निर्भर करता है। कृषि विकास की दिशा में होने वाले प्रयासों का भारतीय जन-जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। किसानों में एक नयी चेतना तथा जीवन के नये मूल्यों का उदय हुआ। विज्ञान के इस युग में तेजी से यह कोशिश की जा रही है कि भारतीय किसान तीव्रता से वैज्ञानिक ढंग से खेती की पद्धतियों को अपना कर अपने देश को तथा विश्व को भूख से मुक्त करे।

★

पशुपालन, दुग्ध वितरण तथा मत्स्यपालन

* ३ *

स्वास्थ्यवर्द्धन के लिए अतिरिक्त खाद्य की भी आवश्यकता पड़ती है। इतना ही स्वास्थ्य के लिए विटामिनों तथा प्रोटीन के लिए दूध, अंडा, मांस आदि की आवश्यकता पड़ती है। मछली भी प्रमुख सहायक खाद्य है। देश की बढ़ती हुई आबादी तथा बढ़ती हुई राष्ट्रीय आय को देखते हुए अंडा, दूध, मांस, मछली आदि जैसे अतिरिक्त खाद्य के उत्पादन को भी प्रोत्साहन देने की आवश्यकता महसूस हुई। इतना ही नहीं, अभी तक हमारे देश की खेती-बारी का काम बहुत अधिक जानवरों पर ही निर्भर करता है। ट्रैक्टर या मशीनें अभी तक इतनी संख्या में हमारे देश में नहीं हैं कि किसान उनका उपयोग कर सके। इसलिए पशुपालन, मुर्गीपालन तथा मत्स्यपालन आदि पर अधिक बल दिया गया।

किसी भी देश की तरक्की इस बात पर निर्भर करती है कि लोगों को खान-पान में स्वास्थ्यवर्द्धक भोजन मिले। तभी सारे काम एक आदमी स्वस्थ मस्तिष्क से चला सकता है। कहा गया है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास रहता है। इस दृष्टि से भी पशुपालन, मुर्गीपालन, तथा मछलीपालन का महत्त्व है।

इतना ही नहीं, सामुदायिक विकास योजना का इस सम्बन्ध में जो कार्यक्रम है उसमें स्वास्थ्य की भावना के साथ यह भी भावना है कि इनको अगर किसान धंधे के रूप में लें तो उन्हें अतिरिक्त आय भी इनके जरिये हो सकती है। हमारे गाँवों में बेरोजगारी तथा अर्द्ध-रोजगारी अभी भी है। खेती-वारी का काम साल भर का नहीं होता। इसलिए किसान यदि पशुपालन, मुर्गी-पालन या मत्स्यपालन का धंधा अपनायें तो इससे उन्हें रोज़गार भी मिलेगा तथा अतिरिक्त आमदनी भी हो सकेगी।

१९५६ की पशुगणना के अनुसार हमारे देश में ३ करोड़ ६० लाख पशु थे, इनमें गाय बैल १ करोड़ ५९ लाख के करीब तथा भैंसों की संख्या ४५० लाख थीं। हमारे देश के पशुओं से जो हमें दूध मिलता है वह दूसरे देशों की अपेक्षा बहुत कम है। वैसे कुछ खास जातियाँ हैं जिनका उत्पादन अच्छा है। अनुमानतः १९५१ में हमारे देश में १७० लाख टन दूध का उत्पादन था जो बढ़ कर १९५६ में १९० लाख टन हुआ। मौजूदा समय में यह बढ़ कर २२० लाख टन तक पहुँचा है।

पंचवर्षीय योजनाओं में पशुपालन को भी महत्त्व दिया गया। पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १४६ ऐसे विकास क्षेत्रों में उन्नत पशुओं के कृत्रिम गर्भाधान की व्यवस्था की गयी। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १४६ प्रमुख विकास क्षेत्रों में कृत्रिम गर्भाधान की

व्यवस्था की गयी तथा पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में स्थापित केन्द्रों में से ११४ का विकास भी किया गया। १९६० तक तो लगभग ६७० कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों की स्थापना सब मिला कर की गयी। दूसरी योजना के अन्तर्गत ३४ और गो-सदनों की भी स्थापना की गयी तथा २४६ गोशालाओं के विकास पर ध्यान दिया गया।

हमारे देश में पशुओं को भी रोग से बचाने की समस्या महत्त्वपूर्ण है। रोग फैलते हैं तो पशुधन का बेहद नुकसान हो जाता है। किसानों को इस नुकसान से बचाने के लिए तथा बीमारियों के समय पशुपालन की रक्षा नये तथा वैज्ञानिक दवाओं से की जा सके, दूसरी योजना के अन्त तक देश में ४००० पशु-चिकित्सालयों की स्थापना की गयी। इनमें ६५० पशु-चिकित्सालयों तथा दवाखानों की स्थापना पहिली पंचवर्षीय योजना की अवधि में की गयी। दूसरी योजना की अवधि में गो-सदनों की योजना में इस दृष्टि से परिवर्तन किया गया ताकि राज्य सरकारें व स्थानीय संगठन भी इनका संचालन कर सकें। गो-सदनों के साथ चर्मालयों की भी व्यवस्था की गयी। पहिली पंचवर्षीय योजना में पशुपालन पर ८ करोड़ तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना में २१ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी।

लेकिन दोनों पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में पशुधन के विकास के सिलसिले में विशेष महत्त्वपूर्ण काम नहीं हो पाया। क्योंकि

दिक्कतें भी पर्याप्त थीं। पशुओं को उचित चारे की व्यवस्था न थी, दूसरे कुछ ऐसे अनावश्यक पशु भी थे जिनका कोई आर्थिक महत्त्व नहीं था। आर्थिक दृष्टि से वे केवल बोझ स्वरूप थे। इतना ही नहीं, पशुधन के विकास के सिलसिले में काम करनेवालों में उचित प्रशिक्षण प्राप्त कर्मचारियों की भी बहुत कमी थी। इन सभी दृष्टियों से तीसरी योजना में पशुधन के विकास के लिए ५४ करोड़ रुपये का व्यय निश्चित किया गया। सभी विकास क्षेत्रों में १० पशुओं के कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों की स्थापना का लक्ष्य निश्चित किया गया।

अच्छे नस्ल के पशुओं के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया। कुछ क्षेत्रों में तो ऐसा है जहाँ बैल अच्छे होते हैं लेकिन गायें कम दूध देती हैं। इसके ठीक उलटा कुछ क्षेत्रों में ऐसा है जहाँ गायें अधिक दूध देती हैं लेकिन अच्छे बैल नहीं होते। अन्त में निर्णय यह हुआ कि अच्छे नस्लों के ऐसे बैलों का विकास किया जाये जो खेती के काम आ सकें तथा गायों की उन नस्लों का देश में विकास किया जाये जिनसे अधिक दूध देनेवाली गाय की जातियों का विकास हो सके। उन्नत नस्लों के बैलों की संख्या की कमी के कारण इनकी संख्या बढ़ाने के लिए सरकार ने कुछ ऐसे केन्द्रों की व्यवस्था की जहाँ कि उन्नत नस्ल के पशु रखे जायँ तथा उनकी संख्या बढ़ायी जाये।

पशुओं के लिए उचित चारा मिल सके ताकि वे स्वस्थ रहें और उनसे अधिक काम लिया जा सके। इस दृष्टि से नये हरे चारों के

सामुदायिक विकास——
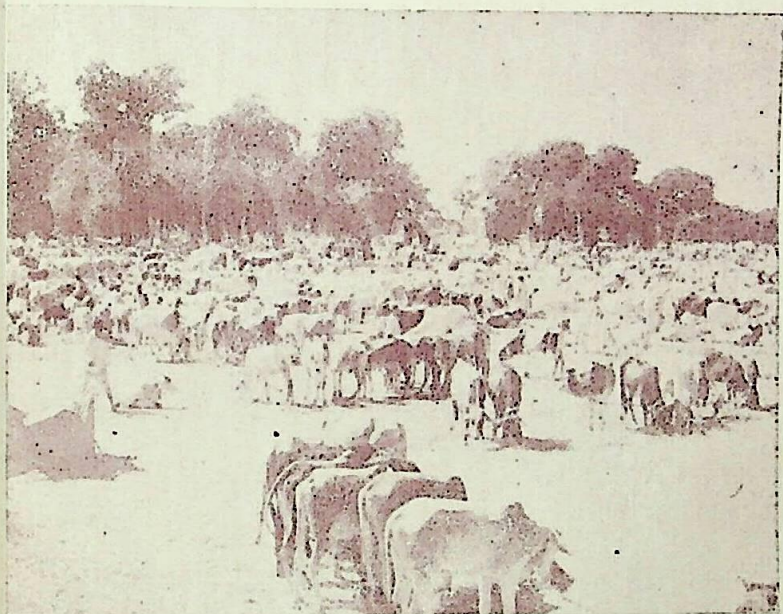
पशु-मेला

विकास पर जोर दिया गया। अनेक ऐसी हरे चारे की फसलों का प्रचार एवं प्रसार किया गया जिनसे कि पशुओं के स्वास्थ्य में सहायता मिलती है। इतना ही नहीं, चारे के गोदामों के बनाने के सम्बन्ध में भी किसानों को बताया गया ताकि यदि गर्मी के मौसम में हरा चारा न मिले तो भी पशुओं को वह उपलब्ध हो सके। ऐसी अनेक हरी चारे वाली फसलों की बोआई पर जोर दिया गया जो अब तक नहीं बोई जाती थीं। हरे चारों की फसलों के सम्बन्ध में भी खेतों पर प्रदर्शन की व्यवस्था की गयी। ताकि किसान उनके बोने आदि के तरीकों को आसानी से सीख और समझ सकें।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में पशुओं में होनेवाले रोगों की रोक-थाम की ओर भी पहिले से अधिक ध्यान दिया गया। छुआछूत के अनेक रोग ऐसे होते हैं जिनसे गाँवों के जानवर बराबर मरने लगते हैं। अनेक ऐसी पशुओं की बीमारियाँ हैं जिनकी रोक-थाम वैसे पहले से भी की जा सकती है। तीसरी योजना के अन्त तक यह उम्मीद की जाती है कि पशु-अस्पतालों या दवाखानों की संख्या बढ़कर हमारे देश में लगभग ८००० हो जायेगी। देश के हर विकास क्षेत्र में एक पशु-चिकित्सालय या एक दवाखाना अवश्य हो जायेगा। छुआछूत के रोगों से बचाने के लिए १९६३-६४ तक देश के हर पशु को टीका लगा दिया जायेगा।

इस प्रकार पशुधन के विकास के लिए भी महत्त्वपूर्ण प्रयास हो रहे हैं। सामुदायिक विकास योजना द्वारा इन सभी कार्यक्रमों की

सफलता के लिए उचित जन-सहयोग प्राप्त करना है। इन सभी योज-नाओं की सफलता के लिए जन-सहयोग बहुत आवश्यक है। यह आवश्यक है कि ग्रामीण कृषकों को इन कार्यक्रमों से होनेवाले लाभ से अवगत कराया जाय।

गांवों में मुर्गीपालन योजना पर भी विशेष ध्यान दिया गया। ताकि एक तो मुर्गी-पालन के काम से लोगों को रोजगार मिलेगा दूसरे अण्डों से अपना स्वास्थ्य भी अच्छा होगा तथा अतिरिक्त आय भी हो सकेगी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में ५ ऐसे क्षेत्रीय मुर्गीपालन केन्द्रों की स्थापना की गयी जहाँ कि उन्नत तथा श्रेष्ठ नस्लों की मुर्गियों का विकास किया जा सके। इसके साथ ही दूसरी योजना की अवधि में २६७ मुर्गीपालन प्रसार केन्द्रों की भी स्थापना की गयी। तीसरी योजना में नये प्रसार केन्द्र खोले जा रहे हैं तथा किसानों को मुर्गी-पालन की ओर आकृष्ट करने की कोशिश की जा रही है।

पशुपालन तथा पशु-रोगों से बचाव के लिए उचित प्रशिक्षण प्राप्त लोगों की आवश्यकता भी बढ़ी। दूसरी योजना के अन्तर्गत ३ पशु-चिकित्सा के नये कालेज खोले गये। मौजूदा १४ में से ५ का विकास किया गया। इस प्रकार पशु-रोगों की रोकथाम की दिशा में भी एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया गया।

गो संवर्द्धन के कार्य में अनेक सार्वजनिक संस्थायें भी काम करती हैं। इसलिए कि गो संवर्द्धन की दिशा में काम करनेवाली सरकारी

तथा गैरसरकारी सभी के मिलेजुले प्रयासों को तीव्र गति से आगे बढ़ाया जाय, एक केन्द्रीय गो संवर्द्धन परिषद की भी स्थापना की गयी थी। १९६० में इसका पुनर्गठन भी किया गया। इस परिषद का महत्त्वपूर्ण काम यह है कि पशुधन के विकास के सम्बन्ध में होनेवाले देश भर के प्रयासों को मिले-जुले ढंग से विकास की दिशा में संगठित करे। साथ दुग्ध उत्पादन वृद्धि की योजनाओं को भी सुचारु रूप से संचालित करे। इतना ही नहीं केन्द्रीय गो संवर्द्धन परिषद द्वारा ऐसे प्रशिक्षण केन्द्र भी संचालित किये जायेंगे जहाँ गोशालाओं तथा कार्यालयों के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित भी किया जायेगा। इस विज्ञान के युग में हर क्षेत्र में आवश्यकता है कि लोग आधुनिक पद्धतियों तथा नयी बातों और तरीकों की जानकारी द्वारा हर क्षेत्र में काम कर अच्छे नतीजे दें।

मछलीपालन

हमारे देश में मछलीपालन के विकास के लिए जल का बहुत बड़ा साधन उपलब्ध है। हमारे देश के तीन किनारों पर समुद्र है। ३००० मील के समुद्री तटवाले इस देश के पास जल का अगाध साधन है। इसके अलावे १७००० मील की लम्बाई की नदियाँ हमारे देश में बहती हैं जिनसे निकलनेवाली नहरों की लम्बाई लगभग १७०,००० मील है। इसके अलावे हमारे देश के कोने-कोने में झीलें और तालाब भी हैं। इन सबको मिला कर मत्स्यपालन की दिशा में बहुत अच्छा भविष्य है। हमारे देश में लगभग १० लाख मछुओ के जीवन-निर्वाह का साधन मछली-पालन है। लेकिन उन्हें मौजूदा स्थिति में कुछ बहुत अच्छी आय नहीं हो पाती। यदि मछली-पालन की या मछली के शिकार की मौजूदा विधियों की उन्नति की जाये

तथा उनकी बिक्री के लिए सहकारिता का रास्ता अपनाया जाये तो मछुओं की आय को आसानी से बढ़ाया जा सकता है।

इतना ही नहीं, मछली-पालन का धंधा हमारे देश के देहातों की समृद्धि को भी बढ़ाने में सहायक हो सकता है। हमारे देश के गाँवों में बहुत-सी झीलें और तालाब हैं। नदियों का किनारा भी यदि सभी गाँवों के पास नहीं पड़ता तो देश के बहुत से गाँव नदी तटों पर बसे हुए हैं। हमारे किसान मछली-पालन के धंधे द्वारा भी अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।

मछली-पालन के आधुनिक एवं सुधरे तरीकों के विकास की ओर भी ध्यान दिया गया है। सरकार इस दिशा में कोशिश कर रही है कि सामुदायिक विकास के माध्यम से गाँववालों का ध्यान मछली-पालन की ओर भी आकृष्ट किया जाये ताकि गाँव के किसान इस धंधे को अपनायें और अपनी आमदनी बढ़ायें।

मछली-पालन योजना के विकास के लिए पहिली पंचवर्षीय योजना में २ करोड़ ८ लाख रुपयों की व्यवस्था की गयी। दूसरी योजना के अंतर्गत मछली-पालन के विकास पर सब मिलाकर ९ करोड़ रुपये व्यय किये गये।

कोचीन में स्थापित केन्द्रीय मत्स्य तकनीकी अनुसंधान केन्द्र ने मछली के शिकार सम्बन्धी आधुनिक तथा उपयोगी यंत्रों, साधनों की खोज की। इसके साथ ही देश के सभी विकास क्षेत्रों में मत्स्य-पालन की सुविधाओं को बढ़ाने का प्रयास किया गया। तालाबों को खोद कर गहरा करने, मछली के बच्चों को उपलब्ध करने आदि विभिन्न कार्यों के लिए सरकारी सहायता भी विकास क्षेत्रों को उपलब्ध की गयी।

पंचायती राज

* ४ *

हमारा देश एक प्रजातांत्रिक देश है। यहाँ की सरकार जनता की जनता के लिए तथा जनता द्वारा चुनी गयी है। जनतंत्र के साथ नियोजन यानी योजना का संचालन हमारे देश की पवित्र धरती पर शुरू हुआ। दुनिया में यह एक नया प्रयोग था। क्योंकि योजना बना कर देश के विकास का काम खास तौर से ऐसे ही देशों में अब तक चला जहाँ जनतंत्र नहीं था। जनतांत्रिक नियोजन का प्रयोग हमारे देश में वैसा ही रहा जैसे कि अहिंसा के बल पर हमारे देश ने आजादी हासिल की। बिना किसी खून-खराबे के इतनी बड़ी साम्राज्यवादी ताकत से हमने लोहा लिया।

जनतांत्रिक नियोजन द्वारा भी यह हो गया कि देश के विकास के लिए जो भी योजना बने उसमें जनता की आवश्यकताओं, उसके स्वप्नों का पूरा-पूरा स्थान हो। कोशिश यह की गयी कि योजना के विशेषज्ञ जनता की राय पाने के बाद ही उपलब्ध प्राकृतिक और आर्थिक साधनों के पूरे उपयोग द्वारा योजनाओं के कार्यान्वयन को आगे बढ़ायें।

इसके साथ ही यह भी आवश्यक था कि जनतंत्र की नींव जनता के दिलों में डाली जाये ताकि जनतंत्र हमारे जनजीवन में घुल-मिल

जाये। इतना ही नहीं, इस प्रकार यदि योजनाओं के प्रशासन और उसको आगे बढ़ाने में जनता का हाथ, दिल और दिमाग लगेगा तो सफलता भी जल्दी मिलेगी। योजनाओं की सफलता के लिए जन-सहयोग बहुत आवश्यक है। गोकि हमारे देश की पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य जन-साधारण तक उच्च जीवन-स्तर को लाना है। आधुनिक और वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से उन तक हर उपलब्ध आधुनिक सुख और समृद्धि लाना है।

इसलिए सामुदायिक विकास योजना की शुरुआत की गयी। सामुदायिक विकास योजना की पूरी-पूरी सफलता के लिए ग्राम-स्तर पर भी संगठनों को इस योजना के शुरू होने के बाद नया रूप देने की कोशिश की गयी। ताकि वे ग्रामीण संगठन योजना के कामों के आगे बढ़ाने में अधिक से अधिक जन-सहयोग दे सकें। प्राकृतिक, आर्थिक तथा वैज्ञानिक शक्ति के साथ ही जन-शक्ति का भी अपना अलग महत्त्व है। अगर हर आदमी की शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग इन योजनाओं के काम में न किया गया तो इससे जनशक्ति का अपव्यय होगा जिससे राष्ट्र का हित कदापि संभव नहीं।

इन्हीं बातों को ध्यान में रख कर पंचायतों के पुनस्संगठन पर अधिक ध्यान दिया गया। हमारे देश में पंचायत की परम्परा काफी पुरानी है। गाँव के बड़े-बूढ़ों की यह संस्था झगड़े आदि के सुलझाने और गाँव के रहनेवालों की भलाई के काम में महत्त्वपूर्ण हिस्सा लेती

सामुदायिक विकास—
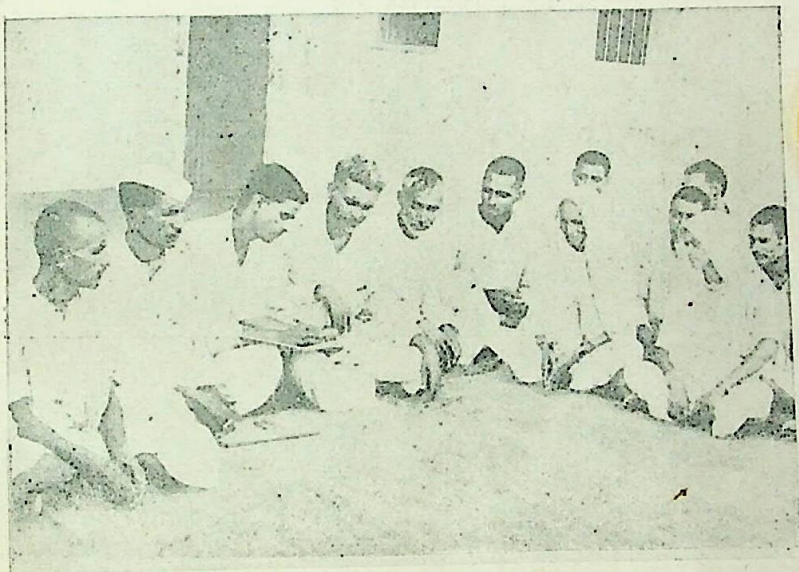
ग्रामीण-पंचायत, जिसमें महिलाएँ भी पीछे नहीं हैं।

ग्रामीण स्वयंसेवक-दल

ग्राम-सेविकाएँ : प्रशिक्षण में
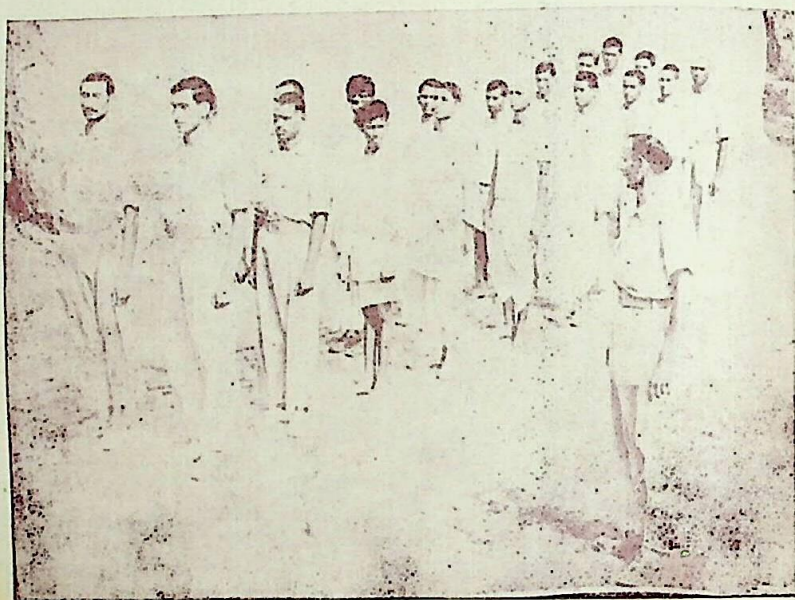
रही है। पंचायत के सर्वसम्मत फैसले को लोग परमेश्वर के फैसले की संज्ञा देते थे। इतिहास में ऐसी कई आदर्श पंचायतों का उल्लेख है जिनमें लोगों की असीम निष्ठा थी।

शासक और साम्राज्य तो लम्बे इतिहास के दौरान में बनते-बिगड़ते रहे लेकिन इन्हीं ग्राम-पंचायतों की वजह से ग्रामीण जीवन में कोई खास परिवर्तन नहीं आया। एक युग था जब हमारे देश में गणराज्य थे। वैदिक काल के बाद ऐसे गणराज्य बहुत दिनों तक थे। वहाँ चुनाव होते थे। उन दिनों भी विभिन्न जनपदों की आधार-शिला ग्राम-पंचायत ही थी।

उन दिनों आबादी बिखरी होती थी। प्रवृत्ति उदार थी तथा भूमि भी पर्याप्त उर्वर थी। लोगों के पास खाने-पीने को काफी था। कला व शिल्प की चीजों से न केवल देश के भीतरी बाजार भरे रहते थे बल्कि विदेशी बाजारों में भी उनकी माँग थी। हर आदमी काम में लगा रहता था। लोग बेकार नहीं थे। खाली वक्त का उपयोग ग्रामीण अनेक कलाकौशल के कामों में करते थे। यह देश उन दिनों समृद्ध था और इसके निवासी शांतिप्रिय और सन्तुष्ट थे। ऐसे ही वातावरण में सांस्कृतिक गतिविधियों की उन्नति हुई। इसका मूर्त प्रमाण हमें मन्दिरों के स्तम्भों, पहाड़ों को काट कर बनायी गयी गुफाओं तथा परम्परागत लोकनृत्यों, लोक-गीतों तथा लोगों की सामान्य अभिवृत्तियों व मूल्यांकन की भावनाओं में मिलता है। राष्ट्र की यह सांस्कृतिक परम्परा सदियों से चली आ रही है।

परंतु अंग्रेजी शासन काल में परिस्थितियाँ बदल गयीं। उन्होंने भूमि राजस्व-व्यवस्था का एक केन्द्रीभूत तरीका लागू किया। इतना ही नहीं, न्याय प्रशासन की भी एक अलग व्यवस्था बनायी जिससे न्याय दिनोंदिन महँगा होता गया और ग्रामीणों का ऋण बढ़ने लगा। न्याय की व्यवस्था के केन्द्रीकरण से भी गाँवों को बड़ा धक्का लगा। राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन छिन्न-भिन्न होने के कारण गाँवों के सामाजिक जीवन के ऊँचे और उदात्त मूल्यों का बहुत ह्रास हुआ। गाँवों में पहिले जैसा आकर्षण नहीं रहा। अशिक्षा, बीमारी, गरीबी तीनों ने गाँवों में बास किया। कलात्मक और सांस्कृतिक केन्द्र सूने पड़ गये। सभी ग्रामीण कलाएँ और संस्कृतियाँ रोगग्रस्त हो गयीं। इनका विकास रुक गया। शताब्दियों जिस कला और संस्कृति के पौधों को लोगों ने सींचा था वे मुर्झा गये। ग्रामीण उद्योग-धंधों को भी फलस्वरूप गहरा धक्का लगा। सारांश यह कि ग्राम-पंचायतों ने जिस सामाजिक और आर्थिक जीवन को बुनियाद गाँवों में डाली थी वह हिल गयी। सामाजिक रूढ़ियों द्वारा ही जीवन का नियमन होने लगा। हमारे देश की स्त्रियाँ, जिन्हें समाज के रथ के दूसरे पहिये की संज्ञा दी गयी थी, पिछड़ गयीं।

इस प्रकार स्त्री वर्ग समाज में महत्त्वहीन हो गया और बुझा तथा निस्पंद ग्रामीण जीवन को प्रगति के मार्ग से हट गया। फलतः गाँवों की आर्थिक दशा बिगड़ती गयी। ग्रामीण शोषण के शिकार होते गये।

भूमि का स्वामित्व भूमि जोतनेवालों के हाथ से हट कर जमींदारों के हाथ में चला गया। पंचायतें भी इस नये वर्ग के हाथ की कठपुतली बन गयीं। पंचायतें एक तरह से दरबारी संस्था के रूप में बदल गयीं जिनमें हाँ-में-हाँ मिलानेवाले लोग होते थे और आम लोगों की जरूरतों और आवश्यकताओं पर ध्यान न दिया जाता था।

लेकिन गांधी जी के नेतृत्व ने पूरे देश को एक नया दृष्टिकोण दिया। जनता स्वतन्त्रता के साथ शोषण के खिलाफ भी अहिंसक ढंग से उठ खड़ी हुई। जैसे-जैसे ज्ञान और शिक्षा का प्रकाश गाँवों में फैले अन्धकार को चीरता गया वैसे-वैसे फिर हमारे गाँवों में नये जागरण के गीत गूंजने लगे। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों द्वारा पुनः भारत के ग्रामों के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पुन-रुत्थान के महान् प्रयास प्रारम्भ हुए। इस योजना की शुरुआत के पहिले यानी १९५२ के पूर्व या १९४७ में स्वतन्त्रता पाने के बाद जो छोटे-मोटे प्रयास इस दिशा में हुए थे उनसे कोई खास प्रगति न हो सकी थी। काम में कोई उचित तालमेल नहीं था। इसलिए समय और साधन व्यर्थ नष्ट होते थे।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के द्वारा गाँवों के सर्वांगीण विकास के कार्यक्रम बनाये गये। गाँवों से सम्बन्धित प्रशासन व्यवस्था को नया रूप दिया गया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत विकास कार्यों में लगे विभिन्न सरकारी विभागों को एक निर्देशन के अन्तर्गत काम करने

के लिए गठित किया गया तथा ग्राम-स्तर तक कार्यक्रम पर अमल करने के लिए संस्था की स्थापना की गयी।

गाँवों के जीवन में इस प्रकार के परिवर्तनों से बड़ा फर्क पड़ा है। अनाज का उत्पादन गांवों में बहुत बढ़ा है। गाँव-गाँव में विद्यालयों की स्थापना हो चुकी है। रात्रि-कक्षाएँ गाँवों में चलाई जा रही हैं ताकि प्रौढ़ों को भी शिक्षित बनाया जा सके। मनोरंजक और सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये जा रहे हैं ताकि गाँवों के जीवन से जो सांस्कृतिक लहर लुप्त हो गयी थी वह फिर पूरे जोर से बह सके। ग्रामीण उद्योग-धन्धों के विकास पर भी पूरा ध्यान दिया जा रहा है। ग्रामीणों को स्वस्थ बनाने के लिए स्वच्छ वातावरण के निर्माण, सफाई आदि पर भी जोर दिया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का जाल-सा बिछ गया है। कोशिश यह की जा रही है कि हर गाँव किसी सड़क से सम्बद्ध करा दिया जाय। अधिकांश गाँवों में इस योजना के द्वारा पीने के लिए शुद्ध जल की व्यवस्था कर दी गयी है—सबसे बड़ी बात तो यह है कि लोगों के जीवन में परस्पर सहयोग, सद्भाव और सहकारिता द्वारा मिल-जुल कर विकास लाने की उदात्त भावना का भी काफी प्रसार हुआ है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम शुरू होने के कुछ वर्ष बाद यह फैसला किया गया कि काम की योजना और उस पर अमल करने के बारे में सलाह देने के लिए खण्ड विकास समितियाँ बनायी जायें।

इसके बाद पंचायतों के पंच और संसद तक के प्रतिनिधि इन समितियों में शामिल किये जायें। इन सलाहकार समितियों को बाद में 'खण्ड विकास समिति' के रूप में बदल दिया गया और यह मुख्यतया गैरसरकारी संस्था बना दी गयी। इसके साथ ही विकास कार्यक्रम को 'जनता के सहयोग से चलनेवाले सरकारी कार्यक्रम' के स्थान पर 'सरकार के सहयोग से चलनेवाले जनता के कार्यक्रम' बनाने का क्रम शुरू हो गया। इस प्रकार की परिस्थिति पचायत राज की स्थापना के पक्ष में चली गयी।

इसलिए पंचायतों की स्थापना को प्रोत्साहन दिया गया और जहाँ वह नहीं हो सका वहाँ विकास मण्डल, पल्ली मंगल समिति जैसी संस्थाएँ बनायी गयीं जिनमें जनता के प्रतिनिधि थे। परन्तु दिन-पर-दिन कानून द्वारा स्थापित संस्थाओं की आवश्यकता अधिक महसूस की जा रही थी। योजना कार्य समिति के सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार-सेवा अध्ययन दल ने, जो श्री बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में बनाया गया था, इस भावना पर प्रकाश डाला और यह सिफारिश की कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और नियन्त्रण की व्यवस्था का भी विकेन्द्रीकरण होना चाहिए तथा विकास का काम स्थानीय क्षेत्रों के जन-प्रतिनिधियों के निर्देशन में चलना चाहिए।

इस प्रकार पंचायती राज की व्यवस्था का उदय हुआ। लोक-

तांत्रिक विकेन्द्रीकरण अथवा पंचायती राज के सिद्धांत को हमारे देश के सभी राज्यों ने स्वीकार कर लिया। पहला कदम राजस्थान ने उठाया और उसके बाद आंध्र प्रदेश ने। फिर अन्य राज्यों ने भी आवश्यक कानून बनाकर जरूरी व्यवस्था पूरी की। परिणामस्वरूप देश के एक बड़े भाग में पंचायत, प्रशासन की एक विकेन्द्रीकृत इकाई बन गयी है और उसके पास विकास के काम के लिए पर्याप्त साधन और अधिकार हैं।

गाँव के सभी वयस्क लोग ग्रामसभा के सदस्य होते हैं। ग्रामसभा एक तरह से गाँव की संसद है। ग्रामसभा द्वारा चुनी गयी पंचायत एक तरह से गाँव के लिए मन्त्रिमण्डल है। इसके निर्देशन और सलाह के लिए एक कानूनी संस्था होती है। यह संस्था पंचायत समिति है जो लगभग १०० गाँवों के एक खण्ड के लिए होती है। पंचायत समिति में इसके अधिकार क्षेत्र की पंचायतों के प्रतिनिधि होते हैं। इसमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों, के प्रतिनिधि भी शामिल किये जाते हैं। विकास खंड या ब्लाक में काम करनेवाले सरकारी कर्मचारी और बजट सहित सभी सरकारी साधन इस समिति के सदस्य होते हैं। खंड, विकास की एक इकाई होता है और समिति नीति निर्धारित करनेवाली संस्था होती है।

पंचायत समिति के ऊपर जिला स्तर पर जिला परिषद जैसी ऊंची संस्था होती है। जिला परिषद में खंड पंचायत समितियों के

अध्यक्ष, राज्य विधान मंडलों के सदस्य तथा संसद सदस्य रहते हैं। यह परिषद पंचायत-समिति का मार्गदर्शन करने तथा उसकी सहायता करने का काम करती है। इस तीन स्तर के ढांचे में हर स्तर की संस्थाओं को कानूनी मान्यता प्राप्त है। हरेक संस्था के अधिकार और जिम्मेदारियाँ निश्चित कर दी गयी हैं। उच्चतर संस्थाएँ निम्न स्तर की संस्थाओं पर नियन्त्रण रखे बिना उनका मार्गदर्शन करती हैं। पंचायती राज की प्रगति के लिए तीन बुनियादी संस्थाएँ हैं—पंचायत, स्कूल व सहकारी समिति। पंचायतें आवश्यक निर्देश देंगी, सहकारी समितियों द्वारा गाँव की आर्थिक जरूरतें पूरी होंगी तथा स्कूल गाँव वालों के मन को एक नये उजाले से भर देंगे जिससे ऊँच-नीच, जाति-पाँति सबका भेद मिटेगा। ईश्वर अंश जीव अविनाशी की बात सबके मन में आवेगी। गाँवों के सांस्कृतिक और सामाजिक विकास के केंद्र-विन्दु ये विद्यालय ही सिद्ध होंगे।

पंचायतों द्वारा ग्रामीण जन-शक्ति के पूरे-पूरे उपयोग पर बल दिया जायेगा ताकि हमारे गाँव शीघ्र सुखी और समृद्ध हो सकें।

पंचायतों के विभिन्न उद्देश्यों की सफलता के लिए युवक मंगल दलों और महिला मंगल दलों की भी स्थापना हर गाँव में सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत की गयी है। युवक मंगल दलों पर मुख्य रूप से कृषि उत्पादन बढ़ाने के विभिन्न कार्यों में सहयोग देने का दायित्व है। युवक मंगल दल के सदस्यों के लिए यह निश्चित

किया गया कि वे कृषि की आधुनिक विधियों से कृषि उत्पादन को बढ़ाने में सहायक हों।

युवकों को इसी उद्देश्य से प्रशिक्षित करने की ओर भी कदम उठाया गया। सामुदायिक विकास मंत्रालय ने ग्रामीण युवक नेताओं को प्रशिक्षित करने की भी एक योजना बनायी। योजना ग्रामसेवक के प्रशिक्षण की ही तरह थी। तीन दिन के शिविरों की सिफारिश की गयी थीं और इस प्रशिक्षण के अन्तर्गत देश तथा देश की जनता के बारे में सामान्य जानकारी तथा पंचवर्षीय योजनाओं और सामुदायिक विकास का, जिसमें कृषि, पंचायत तथा सहकारिता जैसे विषय भी सम्मिलित थे, गहन ज्ञान कराया जाता था। इस योजना के अनुसार प्रति विकास खंड में ५ शिविर आयोजित होंगे जिनमें ४० से ५० युवक भाग लेंगे। इस प्रकार गाँवों में युवक मंगल दलों के संगठन द्वारा भी नया जीवन लाने का प्रयास किया जा रहा है।

सामुदायिक विकास योजना के माध्यम से ग्रामीण महिला जीवन में भी एक क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा रहा है। हमारे देश के प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने कुछ समय पूर्व कहा था कि अगर जनता में जागरूकता लानी है तो पहिले महिलाओं को जगाना होगा। जहाँ उनमें चेतना आ गयी तो उससे परिवार, गाँव और सारे देश में एक नयी चेतना आ जायेगी और महिलाओं के जरिये बालक भी प्रकाश में लाये जायँगे और उन्हें उच्च जीवन तथा उत्तम प्रशिक्षण

सामुदायिक विकास--
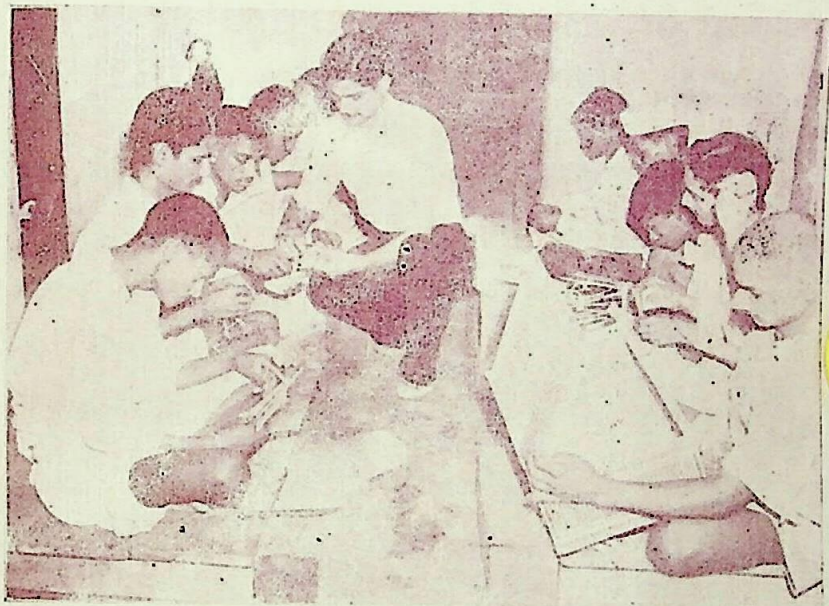
ग्रामों में लघु-उद्योग-प्रशिक्षण

के अवसर मिलेंगे। इस प्रकार हम आज के बच्चों से कल के भारत का निर्माण करेंगे।

सामुदायिक विकास योजना की शुरुआत के बाद पश्चिमी बंगाल की एक ग्रामसभा के खतम होने पर भीड़ के किनारे खड़ी एक प्रौढ़ महिला ने विकास कार्यकर्त्ताओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि समाज एक गाड़ी की भाँति है जिसके दो पहिये हैं। जब एक पहिया टूट जाता है तो गाड़ी नहीं चल सकती। यदि स्त्रियों को अशिक्षित और पिछड़ी हुई रहने देंगे तो आपके समाज की गाड़ी का एक पहिया टूटा हुआ ही रहेगा और यह गाड़ी आगे नहीं बढ़ पायेगी।

इसी दृष्टि से सामुदायिक विकास योजना में ग्रामीण महिलाओं के उत्थान की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाये गये। सभी विकास क्षेत्रों में स्त्रियों और बच्चों के कार्यक्रम को पूरा करने के लिए निम्न-लिखित महिला कार्यकर्त्रियाँ विशेष रूप से नियुक्त हैं।

१—एक महिला समाज शिक्षा संगठक।

२—दो ग्राम-सेविकाएँ।

३—प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के लिए एक महिला स्वास्थ्य निरीक्षक। इस केन्द्र में आकस्मिक जच्चा कार्य के लिए तीन से सात तक जच्चाओं के लिए पलंग भी रहते हैं। और

४—चार दाइयां, एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के लिए तथा शेष तीन उपकेन्द्रों के लिए।

ग्रामीण महिला कल्याण कार्यक्रमों को ठीक से चलाने के लिए प्रशिक्षित महिलाओं की भी आवश्यकता पड़ी। इसलिए महिला कार्यकर्त्रियों के उचित प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गयी। महिला कार्यकर्त्रियाँ ग्रामीण महिलाओं को शिक्षित करती हैं। ग्रामीण महिलाओं का सक्रिय सहयोग विकास योजनाओं की सफलता के लिए मिल सके इसका भी वे प्रयत्न करती हैं। इतना ही नहीं, ग्रामीण महिलाओं के पास घर के काम-काज के बाद बहुत वक्त बचता है। इसलिए विकास-कार्यकर्त्रियाँ ग्रामीण महिलाओं को घरेलू उद्योग-धंधों का भी प्रशिक्षण देती हैं ताकि ग्रामीण महिलाएँ काम से खाली घण्टों का भी सदुपयोग करें और अपने तथा परिवार की सहायता के लिए अतिरिक्त कार्य कर सकें। ग्रामीण महिलाओं को भी कृषि की आधुनिक और वैज्ञानिक विधियों की जानकारी करायी जाती है ताकि पुरुषों की ही भाँति वे भी कृषि उत्पादन को बढ़ाने में सहयोग दे सकें।

सामुदायिक विकास और सहकारिता

* ५ *

सामुदायिक विकास योजना का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हिस्सा सहकारिता है। गाँवों में नया जीवन लाने का काम सहकारिता द्वारा ही सम्भव है। हमारे गाँवों में साधनों की कमी है। लम्बे समय तक शोषण का शिकार हुई गाँवों की जनता की माली हालत ऐसी नहीं है कि वह विकास के साधन अकेले जुटा पाये। कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए एक ओर यह बहुत आवश्यक है कि आधुनिक और वैज्ञानिक साधनों का उपयोग किया जाये। पुराने हलों तथा खेती-बारी के औजारों की जगह कम समय में अच्छा तथा बेहतर काम करनेवाले कृषि सम्बन्धी औजारों की जरूरत है। अच्छी और निरोग फसल के लिए अच्छे उन्नत तथा स्वस्थ बीज की आवश्यकता होती है। फसलों को रोग से तथा कीड़ों से बचाने के लिए वैज्ञानिक तथा आधुनिक दवाओं की आवश्यकता होती है। इतना ही नहीं, खेतों के उपजाऊपन को बढ़ाने के लिए उर्वरकों तथा कम्पोस्ट की खादों की आवश्यकता पड़ती है। बिना इन तमाम साधनों के हुए उन्नत कृषि, या खेती-बारी की ऐसी पैदावार जिससे देश सम्पन्न हो सके या खाद्यान्नों की दिशा में आत्मनिर्भर हो सके यह कदापि संभव नहीं है।

साथ ही सामुदायिक विकास की सफलता का सारा दारोमदार खेती-बारी की सफलता पर ही निर्भर है। ऐसी स्थिति में कोई न कोई रास्ता निकालना था जिससे हमारे देश के गाँवों के किसान इन सभी साधनों को सरलता से पा सकें तथा उन पर कोई बहुत बड़ा माली बोझ भी न पड़े। ऐसा रास्ता केवल सहकारिता का ही है।

वैसे हमारे देश के गाँवों की तरक्की के लिए सहकारिता के रास्ते को अपनाने पर ब्रिटिश शासन काल में भी बल दिया गया था। कृषि सम्बन्धी शाही आयोग ने १९२२ में एक घोषणा की थी कि 'यदि सहकारिता आंदोलन विफल होता है तो यह भारतीय गाँवों के उद्धार की सर्वोत्तम आशाओं की विफलता होगी।'

लेकिन स्वतंत्रता मिलने के पहले सहकारिता का आंदोलन जड़ नहीं पकड़ सका। क्योंकि उन दिनों यह जन-रुचि को आकृष्ट करने में सफल नहीं हुआ; किन्तु स्वतन्त्रता मिलने के बाद धीरे-धीरे सहकारिता के महत्त्व को स्वीकार किया गया तथा इसे गाँवों के उत्थान का एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हिस्सा माना गया। हमारा देश एक समाजवादी समाज की रचना में लगा हुआ है। समाजवादी समाज रचना में सहकारिता का बहुत महत्त्व है। सहकारिता के जरिये धीरे-धीरे आर्थिक सत्ता सहकारी संस्थाओं में सिमटती जायेगी तथा निजी पूँजी का महत्त्व कम होगा। सहकारी व्यवस्था के जरिये शोषण नहीं हो पायेगा। समाजवादी समाज का अर्थ होता है कि कृषि तथा उद्योग

दोनों क्षेत्रों में विकेन्द्रित संस्थाओं का निर्माण, जिनका संचालन निजी लोगों के हाथों में न रहकर समाज के हाथों में हो। जिनका लाभ किसी खास व्यक्ति का न होकर समाज के सभी व्यक्तियों का हो। तथा ऐसी छोटी संस्थाएँ मुख्यतः एकत्र होकर अपने बड़े आकार और संगठन से लाभ उठा सकती हैं।

सामाजिक परिवर्तन पर बल देने के साथ हमारे देश में आर्थिक विकास जो रूप ग्रहण कर रहा है, उससे सहकारिता सम्बन्धित गतिविधियों के संगठन में भी बड़ी सहायता मिल रही है। जिन कामों में सहकारिता के सिद्धांत का प्रयोग हो सकता है, उनकी सीमा इस बात पर निर्भर करती है कि कोई भी सहकारी संस्था उचित रूप में इतनी छोटी हो, जिससे उसके हर सदस्य एक दूसरे से बँधे हों। सभी सदस्यों का एक-दूसरे सदस्य पर पूरा भरोसा हो। किसी भी खास उद्देश्य को पूरा करनेवाली छोटी सहकारी संस्थाओं को मिलाकर एक बड़ा रूप भी दिया जा सकता है क्या देना ही पड़ता है।

परन्तु सहकारिता को असली ताकत छोटी-छोटी और एक ही प्रकार की संस्थाओं से मिलती है। यदि शुरू से ही मजबूत प्राथमिक सहकारी संस्थाएँ बनायी जायें तो ऊँचे स्तर पर मजबूत व प्रभावशाली संगठन का निर्माण सम्भव हो पाता है। इस दृष्टि से जिन क्षेत्रों में सहकारिता का तरीका अधिक लाभकारी है वे हैं कृषि सम्बन्धी ऋण, माल की बिक्री तथा वस्तु शोध, गाँवों में सभी प्रकार

के उत्पादन, उपभोक्ता सहकारी भण्डार, कारीगरों की सहकारी संस्थाएँ और सहकारी निर्माण समितियाँ। इन क्षेत्रों में सहकारिता का उद्देश्य यह है कि सहकारिता आर्थिक गति-विधि के संगठन का मूल आधार बन जाये। इससे यह भी निश्चित किया गया कि नवीन आर्थिक गति-विधियों को सहकारिता के क्षेत्र में लेना चाहिए। इसलिए नवम्बर १९५८ में राष्ट्रीय विकास परिषद् ने यह निश्चय किया कि हर गाँव में सहकारिता को एक प्रारम्भिक इकाई गठित की जानी चाहिए तथा गाँव के लोगों के सामाजिक और आर्थिक विकास का दायित्व ग्राम पंचायत तथा इसी प्रारम्भिक सहकारी समिति को सौंप देना चाहिए। जनता के प्रयासों द्वारा सामुदायिक विकास के जरिये गाँवों के बहुमुखी विकास का मूल आधार सहकारी समितियों तथा पंचायतों को ही माना गया। एक ओर प्रत्येक गाँव की पंचायत अपनी विकास योजना बनाती है तथा दूसरी ओर सहकारी समिति के द्वारा वह उस योजना को रूप देने के लिए आवश्यक आर्थिक साधनों को सहकारी समिति के जरिये इकट्ठा करती है।

हर गाँव में सहकारी समितियाँ गठित की जायँ इस दिशा में राष्ट्रीय विकास परिषद ने पुनः १९६० में सहकारिता के विकास पर स्थापित एक समिति के प्रतिवेदन को स्वीकार किया। सहकारी संस्थाओं को सभी छोटे से छोटे गाँवों में संगठित करने का निश्चय किया गया। फिर भी कम से कम तीन हजार की आबादी (जिसमें

लगभग ६०० कृषक परिवार हों) तथा केन्द्रीय गाँव से उसकी दूरी कम से कम ३ या ४ मील की हो। ऐसे गाँव इस निश्चय की सीमा में आये।

आवश्यक यह भी है कि सहकारी संस्थाओं को आर्थिक सहायता के लिए सरकार पर अधिक निर्भर नहीं करना चाहिए। कुछ दिनों तक के लिए सरकारी सहायता की आवश्यकता हो सकती है। पंचायतें जब कृषि विकास तथा उद्योग-धन्धों या गाँवों के विकास की अन्य वार्षिक योजनाओं का निर्माण करें उस समय उन्हें अपनी सहकारी समिति के आर्थिक साधन की ओर भी देख लेना चाहिए।

फिर भी इन सहकारी समितियों को प्रभावशाली रूप देने के लिए सरकार ने भी हिस्से की पूंजी लगाना निश्चित किया और यह भी तभी सम्भव है जबकि ६० प्रतिशत सदस्य, यदि सरकार हिस्सा ले, इसे स्वीकार करें। सरकार उतने रुपये तक का हिस्सा लेती है जितना रुपया सदस्यों का जमा होता है। राज्य का हिस्सा अधिक से अधिक ५००० रु० या बहुत ही विशेष स्थिति में १०,००० रु० तक का भी होता है। प्रारम्भिक सहकारी समितियों का केन्द्रीय सरकार सहकारी बैंकों के जरिये हिस्सा लेती है।

कोशिश यह भी की जा रही है कि प्रारम्भिक सहकारी समिति की सदस्यता छोटे से छोटे किसान को भी मिल सके ताकि उन्हें भी अपनी खेती-बारी के विकास के लिए उचित मात्रा में सहायता मिल

सके। ऐसे लोगों के लिए सरकार ४ प्रतिशत प्रारम्भिक सहकारी समितियों को तथा अधिक से अधिक २ प्रतिशत हिस्से की पूँजी पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों को अनुदान भी देती है। बहुत-सी बड़ी सहकारी संस्थाओं को व्यवस्था के संचालन के लिए भी अनुदान देती हैं।

पिछली दो पंचवर्षीय योजना की अवधि में कृषि ऋण समितियों की संख्या १०५००० से बढ़कर २१०००० हो गयी तथा इनकी सदस्य संख्या ४४ लाख से बढ़कर १ करोड़ ७ लाख हो गयी। इन दोनों पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में जो प्रारंभिक समितियों ने ऋण वितरित किया वह २३ करोड़ रुपयों से बढ़कर २०० करोड़ रु० तक हो गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि-उत्पादन-वृद्धि की महत्त्वाकांक्षी निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए सहकारी ऋण की महत्त्वपूर्ण व्यवस्था को गयी। तीसरी योजना का लक्ष्य है कि प्राथमिक सहकारी संस्थाओं की सदस्य संख्या ३७० लाख तक पहुँच जाय। ऐसी सहकारी समितियों की कुल संख्या तीसरी योजना की अवधि में बढ़कर २ लाख ३० हजार हो जायेगी। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि देश भर में अल्प तथा मध्यम अवधि के ऋण लगभग ५३० करोड़ रुपयों के होंगे तथा लम्बी अवधि के ऋण लगभग १५० करोड़ रुपयों के होंगे।

तीसरी योजना में देश में कृषि उत्पादन के लक्ष्यों की पूर्ति विशेष प्रकार से सहकारी समितियों की सफलता पर ही निर्भर है। पहली

पंचवर्षीय योजना में लगभग १६०,००० प्रारंभिक समितियाँ थीं। लेकिन उनकी कार्य-दशा बहुत अच्छी नहीं थी। इसलिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में लगभग ४२,००० सहकारी समितियों को ठीक से संगठित और संचालित करने की दिशा में कोशिश की गयी। तीसरी योजना में ५२,००० प्राथमिक सहकारी संस्थाओं को पुनस्संगठित करने की योजना है। कृषि की उन्नति के लिए ऋण की उचित व्यवस्था के लिए 'कृषि विकास वित्त निगम' की भी स्थापना की गयी है।

इन्हीं प्राथमिक सहकारी संस्थाओं को साधन सहकारी समितियों का भी नाम दिया गया। इन समितियों में गाँव के सभी परिवार, चाहे वह कृषक हों अथवा अन्य, सम्मिलित हो सकते हैं।

इन समितियों के विभिन्न कार्य इस प्रकार हैं :—

१—प्रत्येक सदस्य की उसके क्षेत्र के उपयुक्त उन्नत कृषि-विधियों को ध्यान में रखते हुए हर सदस्य की कृषि उत्पादन योजना तैयार करना और उसके अनुसार अल्पकालीन तथा मध्यकालीन ऋण देते समय हर सदस्य से यह एकरारनामा लिखाया जाता है कि वह अपनी उपज को क्रय-विक्रय समिति द्वारा बेचकर अपना ऋण चुकायेगा। विशेष स्थिति में ऋण की अदायगी की नकदी में भी सुविधा है।

२—खेती, घरेलू उद्योग तथा अन्य दैनिक आवश्यकताओं को

वस्तुओं के प्रबंध का कार्य करना—इसके लिए थोक दर पर माल खरीदकर सदस्यों को उचित मूल्य पर देना।

३—सदस्यों की कृषि एवं अन्य उपज की बिक्री का प्रबंध क्रय-विक्रय समितियों द्वारा करना।

४—अन्य शैक्षिक एवं अनौपचारिक कार्य करना जिन्हें सदस्य करना चाहें।

साधन सहकारी समितियों में हिस्से का मूल्य १० रुपया होता है जिसमें ५ रुपया हिस्सा जारी करने पर देना होता है और शेष मूल्य २ वार्षिक बराबर किस्तों में अदा होता है। सदस्य अपने हिस्से का मूल्य एक साथ भी दे सकता है। इन समितियों के हिस्से में सरकार की कोई साझेदारी नहीं होती। सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा खरीदे हुए हिस्से की माली कीमत के दो गुने तक सीमित होता है।

समिति की सब ताकत सदस्यों की साधारण सभा में निहित होती है। दैनिक काम-काज को चलाने के लिए संचालक-मंडल का चुनाव प्रत्येक वार्षिक अधिवेशन में होता है जिसमें ५ या ७ संचालक चुने जाते हैं। उनमें से संचालक मंत्री व खजांची का भी चुनाव होता है। हिसाब-किताब रखने के लिए संचालक-मंडल अंशकालिक लिपिक नियुक्त कर सकता है।

प्रत्येक साधन सहकारी समिति को सरकार की ओर से ९०० रुपये की सहायता मिलती है जो कि ५ वर्ष के अंदर दी जाती है।

पहले वर्ष में ३०० रुपये, दूसरे वर्ष में २०० रुपये, तीसरे वर्ष में २०० रुपये, चौथे वर्ष में १०० तथा पाँचवें वर्ष में १०० रुपये।

साधन सहकारी समितियाँ अलग-अलग रहकर अकेली उन्नति नहीं कर सकतीं। उनको तीन निम्नलिखित संस्थाओं से सम्बन्ध रखना आवश्यक होता है।

१—ऋण प्राप्त करने के लिए केन्द्रीय बैंक या जिला सहकारी बैंक से।

२—कृषि उपज की बिक्री के लिए क्षेत्र की सहकारी क्रय-विक्रय-समिति से।

३—बीज, खाद तथा कृषि-यंत्र आदि प्राप्त करने के लिए क्षेत्रीय सहकारी संघ से।

इस प्रकार साधन सहकारी समितियों के द्वारा ग्रामीण समुदाय के जीवन में महान् परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा रहा है।

सहकारी समितियों के विकास के साथ सहकारी हाट व्यवस्था का भी प्रबंध किया जा रहा है। गाँवों के किसानों को इस बात की तकलीफ थी कि उनकी उपज की उचित कीमत उन्हें नहीं मिल पाती थी। जल्दी उन्हें उपज का मूल्य मिल जाये, इसलिए वे अपनी उपज घाटा उठाकर भी बेच देते थे। परिणामस्वरूप उन्हें अपने कठिन परिश्रम का उचित मूल्य नहीं मिल पाता था। अक्सर मध्यस्थ व्यवसायी अपनी पूँजी के कारण किसानों के कठिन परिश्रम से पैदा की

गयी उपज पर लाभ उठाते थे। साथ ही किसान की अवस्था अच्छी नहीं हो पाती थी। इस समस्या का हल निकालना जरूरी हो गया था। यह आवश्यक हो गया कि किसान को इन मध्यस्थ व्यवसायियों के शोषण से बचाया जाये।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए सहकारी हाट व्यवस्था तथा सहकारी क्रय-विक्रय समितियों का गठन किया गया। सहकारी हाट-व्यवस्था का संचालन अच्छी तरह करने के लिए सरकार ने प्रशिक्षित व्यक्तियों की व्यवस्था करने तथा ऐसी समितियों में हिस्से की पूँजी खरीदने का भी निश्चय किया। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में १८६९ प्राथमिक सहकारी हाट समितियों का देश में संगठन किया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना में ६०० और सहकारी हाट समितियाँ गठित की जायँगी। देश भर की २५०० मण्डियों के समीप कम से कम एक सहकारी हाट समिति अवश्य ही गठित की जायेगी।

सहकारी हाट समितियाँ किसानों की उपज का उनकी सुविधा के अनुकूल मूल्य देने के अलावे, उन्हें कृषि की पैदावार की वृद्धि से सम्बन्धित अन्य आवश्यक चीजें भी उपलब्ध करायेंगी। सहकारी हाट व्यवस्था को संगठित तथा सुचारु रूप से चलाने के लिए अनाज के गोदामों की भी व्यवस्था की गयी। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में १६७० गोदाम स्थापित किये गये तथा तीसरी योजना में लगभग ९८० और गोदाम स्थापित किये जायेंगे। दूसरी योजना की अवधि

में गाँवों में लगभग ४१०० गोदाम स्थापित किये गये तथा तीसरी योजना में ऐसी आशा है कि इन गोदामों की संख्या बढ़कर ९२०० हो जायेगी, क्योंकि इनके विकास पर भी लगातार बल दिया जा रहा है।

सहकारी खेती

खेती की पैदावार बढ़ाने तथा गाँवों के सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की जो अनेक कोशिशें चल रही है उनमें सहकारी खेती का भी धीरे-धीरे महत्त्वपूर्ण स्थान होता जा रहा है। असलियत तो यह है कि अगर कृषि की पद्धति में आमूल परिवर्तन होता है तो उसका प्रभाव किसानों के जीवन पर भी पड़ेगा। उनके दृष्टिकोण पर भी पड़ेगा। सामुदायिक विकास योजना की सफलता केवल इस बात पर आधारित नहीं है कि गाँवों में खेती की उपज बढ़े। बल्कि खेती की उपज को बढ़ाने के साथ हर किसान के सोचने-समझने तथा उसके सामाजिक व्यवहारों के तौर-तरीकों में भी परिवर्तन लाना है। हमारे गाँवों के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन में भी गुलामी के कारण गिरावट आयी। लोगों में वर्गीय भेद के अलावे फूट और वैमनस्य बढ़ा। झगड़े और रगड़े बढ़े। इनका भी असर उत्पादन और उत्पादन के साधनों पर पड़ा।

कोई देश, कोई जाति या कोई भी छोटी इकाई, चाहे वह किन्हीं भी तत्त्वों का संगठन हो, आगे नहीं बढ़ सकता या तरक्की

नहीं कर सकता जब तक उसके सभी सदस्यों में परस्पर मेल-भाव से आगे बढ़ने की भावना न हो। एक दूसरे की मदद करने की भावना न हो। हमारा देश तो वह देश है जहाँ हजारों वर्षों पहिले 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात् 'सारा संसार ही एक परिवार है' का स्वर गूँजा था। लेकिन धीरे-धीरे वर्गगत स्वार्थों के उदय होने के कारण यह स्वर धीमा हो गया।

युग बदला। हमारा देश बहुत-सी धूल भरी आँधियों के बीच गुजरा। फिर देश में एक चेतना आयी। पिछली कमियों और खामियों की ओर लोगों का ध्यान गया। लोगों ने पिछले इतिहास के पन्नों में उन भूलों की ओर ध्यान दिया जिनके कारण हमारे देश को आँधियों के आगे झुकना पड़ा था।

एक बार जब देश जगकर खड़ा हुआ तो उन रास्तों की तलाश हुई जिनसे देश के क्या गाँव, क्या शहर सबकी व्यवस्था को नये सिरे से नया रूप देने का प्रयास शुरू हुआ। ऐसे ही प्रयासों की एक कड़ी सहकारी खेती भी है। सहकारी खेती एक ऐसी पद्धति है जिसमें कि भूमि पर निजी स्वामित्व तो बना रहता है लेकिन साधन सबसे मिलकर इस्तेमाल किये जाते हैं। इस पद्धति को हमारे देश में संयुक्त सहकारी खेती के नाम से पुकारा गया।

सहकारी खेती के विकास की ओर भी तेजी से कोशिश की जा रही है तथा देश में धीरे-धीरे सहकारी कृषि का प्रयोग लोकप्रिय भी

हो रहा है। सहकारी खेती ऐसे देशों के लिए बहुत लाभकर है जिनमें जनसंख्या का दबाव अधिक है, उनमें भूमि के स्वामित्व की समस्याएँ और इन समस्याओं से उत्पन्न सामाजिक सम्बन्ध गुणात्मक दृष्टि से उन देशों की अपेक्षा भिन्न होते हैं, जहाँ जमीन की भूख इतनी तेज नहीं होती। उदाहरण के तौर पर हमारे देश में कृषि, मनुष्य और भूमि के बीच की समस्या ही अधिक है। सैकड़ों वर्षों से हमारे देश का कृषि क्षेत्र घोर अन्याय और शोषण का शिकार रहा है। आजादी के बाद भूमि-सुधार सम्बन्धी जो कानून लागू किये गये उनका उद्देश्य केवल एक ऐसी परिस्थिति को संशोधित करना था जो नैतिक दृष्टि से अन्यायपूर्ण तथा बौद्धिक दृष्टि से एक ऐसे देश में जहाँ भूमि दुर्लभ होने के बावजूद कुछ थोड़े लोगों के हाथों में केन्द्रित हो, उपज थोड़ी होती हो, लगान की दरें ऊँची हों, किसान निर्धन हों, लेकिन उनका धंधा खर्चीला हो, भूमि-व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना आवश्यक होता है।

स्वयं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी हमारे देश में सहकारी खेती की पद्धति को अपनाने के पक्ष में थे। १५ फरवरी १९४२ के 'हरिजन' में गांधी जी लिखते हैं—"मेरा पूर्ण विश्वास है कि हमें खेती में पूरा लाभ तब तक नहीं हो सकता जब तक कि हम सहकारी खेती को न अपनायें। क्या यह बात उचित नहीं प्रतीत होती कि यह ज्यादा अच्छा है कि गाँवों के १०० परिवार खेती के लिए अपनी जमीनें

इकट्ठी कर लें और फिर अपनी आमदनी को आपस में बाँटें, बजाय इसके कि जमीन १०० टुकड़ों में अलग-अलग बँटी हुई हो।" सहकारी खेती के सम्बन्ध में गांधीजी का यह विचार था कि जमीन की मालियत भी सहकारी हो और उस पर जुताई बोआई भी सहकारी ढंग से की जाये। जमीन के मालिक सहकारी ढंग से काम करें और पूँजी, औजार, पशु, बीज आदि भी समुदाय की सम्पत्ति हों। गांधीजी का यह कहना था कि उनके द्वारा सुझायी गयी सहकारी खेती की व्यवस्था में जमीन की सूरत ही बदल जायगी और किसानों की गरीबी और बेकारी भी दूर हो जायेगी। इस सम्बन्ध में उन्होंने आगे कहा है कि 'यह तभी संभव है कि जब लोग एक दूसरे के मित्र बन जायें और एक परिवार के समान रहें।"

कुछ लोगों का यह भ्रम है कि सहकारी खेती का रास्ता चुनने से जमीन पर का उनका निजी स्वामित्व समाप्त हो जायगा। लेकिन जिस संयुक्त सहकारी खेती का हमारे देश में प्रयोग हो रहा है उसमें जमीन का स्वामित्व जैसे-का-तैसा बना रहता है और जमीन से होनेवाली आय के बँटवारे के समय जमीन की मालकियत और कीमत का ख्याल रखा जाता है। इस प्रकार की सहकारी कृषि-समितियों से कोई किसान जब भी चाहे, कुछ बातों को पूरा करने के बाद, अपनी जमीन अलग भी कर सकता है।

सहकारी खेती को लोकप्रिय बनाने का प्रयास सरकार की ओर

से प्रारंभ हुआ। सहकारी खेती की योजना को संचालित करने के लिए सामुदायिक विकास तथा सहकारिता के केन्द्रीय मंत्रालय ने राष्ट्रीय सहकारी खेती परामर्शदात्री-परिषद की स्थापना की है। अग्रगामी योजना के रूप में देश भर में लगभग ३२०० सहकारी कृषि-समितियों के संगठन का लक्ष्य है। साथ ही जो लोग स्वेच्छा से सहकारी समितियाँ संगठित करेंगे उनकी भी सहायता की जायेगी।

सहकारी कृषि की अग्रगामी योजनाओं को संचालित करने तथा अन्य सहकारी कृषि समितियों को मध्य तथा लम्बी अवधि के ४००० रुपये तक का ऋण तथा गोदाम और पशुशालाओं को बनाने के लिए ५००० रुपये तक का अनुदान, तथा व्यवस्था के लिए १२०० रु० का अनुदान लगभग ३ या ५ वर्षों की अवधि के भीतर सहकारी कृषि-समितियों को उपलब्ध करने की व्यवस्था है। भूमि-विहीन तथा अन्य छोटे-मोटे किसानों द्वारा शुरू की गयी सहकारी कृषि समितियों में सरकार स्वयं हिस्से की पूँजी खरीदेगी। सरकार ऐसी सहकारी कृषि-समितियों में तभी हिस्से की पूँजी २००० रुपये तक की लेगी और ऐसा तभी होगा जब सहकारी कृषि के समिति के सदस्य भी उतनी ही पूँजी लगभग १० वर्ष तक की सदस्यता का निश्चय करके जुटा लें। सहकारी कृषि समितियों को विकास खंडों तथा कृषि विभाग से भी सहायता देने पर बल दिया जा रहा है। जिन किसानों के पास छोटी आराजियाँ हैं उन्हें सहकारी कृषि-समितियों को चलाने का

प्रयास करना चाहिए तथा सहकारी खेती समिति का सदस्य हो जाना चाहिए।

सहकारी कृषि समितियों की सदस्यता केवल उन्हीं लोगों को मिलनी चाहिए जो खेतों पर काम कर सकें या इससे सम्बन्धित कामों में भी हिस्सा ले सकें।

तीसरी योजना में हर जिले में चलायी जानेवाली सहकारी कृषि की अग्रगामी योजनाओं के लिए राज्य सरकारों द्वारा ६ करोड़ रुपए व्यय करने का लक्ष्य है। अन्य सहकारी कृषि संस्थाओं की सहायता के लिए केन्द्र में भी ६ करोड़ रुपये की व्यवस्था अलग से की गयी है।

इन अग्रगामी योजनाओं द्वारा सहकारी कृषि के प्रयोग किये जायेंगे तथा इनसे मिले अनुभवों के आधार पर सहकारी खेती का आगे और तेजी से विकास किया जायेगा। तीसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन की वृद्धि के जो नियत लक्ष्य हैं उनको पाने में सहकारी कृषि समितियों से भी बड़ी सहायता मिलेगी।

इस प्रकार सहकारिता के विभिन्न पक्षों द्वारा सामुदायिक विकास योजना के बहुमुखी उद्देश्यों की पूर्ति की ओर हमारा देश आगे बढ़ रहा है। पूरे देश में सहकारी समितियाँ बन गयी हैं। इनसे गाँवों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में परिवर्तन लाने में बड़ी सहायता मिल रही है।

सामुदायिक विकास में ग्रामीण और लघु-उद्योग

* ६ *

सामुदायिक विकास के कार्यक्रम का एक खास लक्ष्य ग्रामीण और लघु-उद्योगों के विस्तार का भी है। सामुदायिक विकास की योजना की पूरी तरह सफलता तब तक नहीं हो सकती जब तक ग्रामीण और लघु-उद्योगों की जड़ हमारे देश के गाँवों में न जम जाये। गाँवों की आर्थिक स्थिति का सुधार सामुदायिक विकास योजना का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है तथा इस उद्देश्य की पूर्ति कृषि के साथ ही ग्रामीण और लघु-उद्योगों पर भी निर्भर करती है।

हमारा देश कृषिप्रधान देश है इसलिए मूलतः गाँवों की अर्थ-व्यवस्था पर ही देश की अर्थव्यवस्था निर्भर करती है। देश की अर्थ-व्यवस्था को उठाने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि गाँवों की अर्थ-व्यवस्था को उठाया जाये। गाँवों की अर्थव्यवस्था को उठाने के लिए कृषि तथा कृषि के सहायक धन्धों का योजनाबद्ध विकास किया जा रहा है। फिर भी हमारे देश की कृषि पर आबादी का गहरा दबाव है। गाँवों में बसनेवाली पूरी आबादी का जीवननिर्वाह निश्चित रूप से केवल खेती-बारी के सहारे नहीं हो सकता।

साथ ही खेती-बारी का काम पूरे वर्ष नहीं चलता। खेती-बारी के काम को अकेला आदमी जहाँ देख सकता है वहाँ एक ही परिवार

के कई आदमी उसको देखते हैं। इतना ही नहीं, उसके बावजूद भी बहुत से लोग, जो कुछ भी काम नहीं करते या जिनके पास कोई काम नहीं रहता, दूसरों के आश्रित हो जाते हैं। इस प्रकार देश की जन-शक्ति का देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में पूरा-पूरा सहयोग नहीं मिल पाता।

इस प्रकार कुछ लोगों के पास अर्द्ध-रोजगार है तो कुछ लोग बिलकुल बेरोजगार रहकर अपनी शक्ति और क्षमता को नष्ट करते रहते हैं। देश के स्वतन्त्र होने के बाद गाँवों के पुनर्निर्माण का कार्यक्रम शुरू हुआ। ग्रामीण जन-शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग गाँवों की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में किया जाय की दृष्टि से ग्रामीण और लघु उद्योगों के प्रसार पर बल दिया गया।

स्वतन्त्रता के पहिले भी जब राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन का नेतृत्व महात्मा गांधी के हाथों में आया तो उन्होंने राजनैतिक आन्दोलन के साथ-साथ उसके आर्थिक पहलू पर भी पूरा ध्यान दिया था। उनके मस्तिष्क में पहिले से ही स्वराज पाने के बाद की देश की आर्थिक रूप-रेखा थी। वे उसी समय से गाँवों को एक आत्मनिर्भर इकाई बनाने में प्रयत्नशील हो गये थे। गाँव-गाँव हथ-करघा, चर्खा तथा अन्य कलात्मक पारम्परिक उद्योगों के विकास के भी कार्यक्रम उन्होंने स्वदेशी आन्दोलन के साथ शुरू कर दिया था।

स्वदेशी आंदोलन यानी ऐसे वस्त्रों के या ऐसी वस्तुओं के उप-

योग के वे महान् समर्थक थे जिनका उत्पादन अपने देश में हुआ हो। इस प्रकार वे देश को विदेशी शोषण से बचाने के साथ-साथ देश के उस धन को भी बचाने का प्रयास कर रहे थे जो विदेशों को चला जाता था। उसी विदेशों को जानेवाले धन को वचाने का आन्दोलन चलाकर उन्होंने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। क्योंकि मशीनों के खरीदने की ताकत हमारे गाँवों में नहीं थी। हमारे गाँव के किसान या अन्य लोगों की आर्थिक क्षमता ऐसी न थी कि वे मशीनों को खरीद कर कोई रोजगार चला सकते। इसीलिए महात्मा गांधी ने खादी पहनने का आंदोलन चलाया। ताकि गाँव वालों को तकली या चर्खे से सूत कातने और छोटे-छोटे करघों पर उनकी बुनाई करने में कोई विशेष आर्थिक परीशानी नहीं उठानी पड़ेगी। देश के पढ़े-लिखे तथा सम्पन्न लोगों ने उनके नेतृत्व में खादी को अपनाया भी। इस प्रकार हमारे देश के गाँवों में खादी के जरिये, चर्खे और तकली के जरिये ग्रामीण और लघु उद्योगों के साथ-साथ गाँवों की आर्थिक आत्मनिर्भरता की यात्रा की शुरुआत हुई।

वैसे प्राचीन काल में हमारे देश के ग्रामीण तथा लघु उद्योग दुनिया भर में प्रसिद्ध थे। भारतवर्ष की कला का दुनिया में नाम था। हमारे देश के करघे की बुनी हुई वस्तुएँ दूसरे देशों के बाजारों तक में बिकती थीं। हमारा देश अन्न और धन से भरा-पूरा था।

जमीन अधिक थी। आबादी कम थी। इसलिए लोगों ने उद्योग-धंधों के साथ हस्तकलाओं के क्षेत्र में भी बड़ी उन्नति की।

हमारे देश में पत्थरों की खुदाई, या पत्थरों को काटकर बनाये गये चित्रों, मूर्तियों और मन्दिरों को आज भी विदेशी यात्री देखते हैं तो वे प्राचीन काल की उन कलात्मक कृतियों को देखकर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। मूर्तियों को देखने से उस समय की कला के विकास का पता चलता है। लेकिन धीरे-धीरे जब हमारा देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ता गया तो देश की जन-कला का, ग्रामीण उद्योगों का भी विनाश हुआ। समय की उड़ी हुई धूल के नीचे तमाम भारतीय कला-कौशल दब गया।

लेकिन स्वतन्त्रता के बाद जब देश के पुनर्निर्माण की तथा देश में एक आत्म-निर्भर अर्थ-व्यवस्था के निर्माण की कोशिश शुरू की गयी तो उसमें ग्रामीण तथा लघु-उद्योगों के विकास तथा प्रसार की योजना बनाई गयी। हस्त-कलाओं को भी पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया। क्योंकि इनके जरिये गाँवों में एक आत्म-निर्भर अर्थ-व्यवस्था की नींव तो पड़ेगी ही साथ ही गाँवों में बेरोजगार तथा अर्द्ध रोजगार से पीड़ित लोगों को रोजगार भी मिलेगा।

कुछ लोगों का कहना है कि इस वैज्ञानिक और तकनीकी तथा अणुशक्ति के युग में लघु-उद्योगों या ग्रामीण उद्योगों तथा हस्त-कलाओं के विकास की बात बुद्धिमानी की बात नहीं है। विशाल

उद्योगों के सहारे ही किसी देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ और मज-बूत किया जा सकता है। कुछ लोगों ने ग्रामीण तथा लघु-उद्योगों और हस्त-कलाओं के विकास के प्रयासों पर यह आरोप भी लगाया कि इससे दृढ़ अर्थ-व्यवस्था का निर्माण नहीं होगा बल्कि इन प्रयासों से ऐसा लगता है जैसे भारतीय लोग केवल प्राचीन के मोह में अभी भी पड़े हुए हैं तथा वे दुनिया में चलनेवाली वैज्ञानिक तकनीकी और आणविक शक्तियों से लाभ नहीं उठाना चाहते।

लेकिन उनके ये आरोप बहुत हद तक निराधार व बेबुनियाद हैं। क्योंकि देश की इतनी बड़ी आबादी को जो गाँवों और नगरों में फैली हुई है उसको केवल विशाल उद्योगों में रोजगार देना अभी सम्भव नहीं है। क्योंकि औपनिवेशिक अर्थ-व्यवस्था के विकास के कारण हमारे देश की आर्थिक शक्ति का उचित विकास नहीं हो पाया था। इसलिए हमारे देश की आर्थिक क्षमता के बाहर था कि वह इतनी बड़ी आबादी को बड़े उद्योगों में उचित रोजगार दे सके। और यह भी सही है कि खेती-बारी के पूरे काम में लगे लोगों तथा उद्योग-धन्धों या अन्य कामों में जो लोग लगे हैं, उनके अलावे अर्द्ध-रोजगार या बेरोजगार पड़ी जनशक्ति का भी उपयोग करना जरूरी है। देश के उत्पादन को बढ़ाने के लिए देश की पूरी जन-शक्ति का यथाशक्ति उपयोग करना बेहद आवश्यक है। इसलिए पहिली, दूसरी तथा तीसरी तीनों पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण तथा लघु-उद्योगों के विकास पर पूरा ध्यान दिया गया।

इतना ही नहीं, हमारा देश जनतांत्रिक समाजवादी समाज के निर्माण की ओर बढ़ रहा है। यानी समाजवादी समाज का निर्माण किसी वर्ग को समाप्त न कर जनतन्त्र के रास्ते से किया जायेगा। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं का भी यह लक्ष्य है कि गरीब-अमीर की खाई धीरे-धीरे कम हो। देश के सभी लोगों को उनके जीवन के विकास के लिए पूरा अवसर मिले। इतना ही नहीं, आर्थिक शक्ति पर जो चन्द लोगों का एकाधिपत्य है वह कम किया जाये। राष्ट्रीय आय की वृद्धि जो हो, वह देश के सभी लोगों में वितरित की जाये।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमारे देश में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की स्थापना की गयी, जिनका संचालन सरकार के हाथों में है। सार्वजनिक क्षेत्र में देश में प्राय: सभी बुनियादी विशाल उद्योगों की स्थापना की गयी है। जैसे लोहा और इस्पात, विशाल तथा छोटी मशीनों के बनाने के कारखाने, विद्युत यंत्रों, दवाओं तथा अनेक प्रकार के उद्योगों की स्थापना सार्वजनिक क्षेत्र में की गयी है। चूंकि सरकार खुद इन कारखानों का संचालन करती है और सरकार जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की है इसलिए इन सभी कारखानों का भी स्वामित्व एक तरह से जनता के हाथों में ही है। इनके द्वारा अर्जित लाभ का हिस्सा पूरे देश की जनता का है न कि किसी खास व्यक्ति का।

इस प्रकार समाजवादी समाज रचना की ओर भी महत्त्वपूर्ण और ठोस कदम उठाये गये हैं। साथ ही ग्रामीण और लघु उद्योगों

के विकास से भी समाजवादी समाज के निर्माण में सहायता मिलेगी, क्योंकि इन उद्योगों से एक विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के निर्माण में सहायता मिलेगी। उत्पादन के इन साधनों पर समाज के चंद उद्योगपतियों का आधिपत्य नहीं हो पायेगा। इतना ही नहीं, गाँवों के छोटे से छोटे तथा निर्धन लोग भी इन ग्रामीण लघु उद्योगों से लाभ उठा सके, इस दृष्टि से ग्रामीण और लघु उद्योगों की सहकारी समितियों की स्थापना पर जोर दिया जा रहा है तथा ऐसी सहकारी समितियों की सरकार हर प्रकार से सहायता भी कर रही है। इतना ही नहीं, ग्रामीण उद्योग-धंधों को चलाने के लिए इनमें लगे लोगों को आधुनिक तकनीकी प्रशिक्षण देने की भी सुविधा की व्यवस्था की जा रही है। साथ ही उत्पादन किये गये माल की बिक्री सरलता से हो सके इसलिए बिक्री के लिए भी सहकारी समितियों का सहारा लिया जा रहा है। इन्हें पूरी तरह से एक नया तथा वैज्ञानिक रूप भी देने का प्रयास किया जा रहा है।

पहली पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण तथा लघु-उद्योगों के विस्तार के लिए उनकी सहायता तथा उनको परामर्श देने के लिए एक अखिल भारतीय परिषद की स्थापना की गयी जो हथ-करघा उद्योग, खादी तथा ग्रामोद्योग, लघु-उद्योग तथा हस्तकला-उद्योगों के विकास में सहायता देती है। दूसरी योजना में सभी राज्यों में खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना एक महत्त्वपूर्ण कदम था। ऐसे उद्योगों के संचालन

के लिए एक तीन पहियेवाला संगठन, जैसे केन्द्र में, उद्योग तथा वाणिज्य मंत्रालय, अखिल भारतीय परिषदें, तथा राज्यों के उद्योग विभाग तथा उद्योग परिषदें, ग्रामीण तथा लघु उद्योगों के विस्तार की दिशा में तेजी से लगा है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम की महत्त्वपूर्ण इकाई, जो विकास-खंड हैं, उनमें दूसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक लगभग १६५० विकास क्षेत्रों में सहायक विकास अधिकारी, उद्योग, की नियुक्ति हुई। विकास-खंड के क्षेत्र से सम्बन्धित गाँवों में ग्रामीण उद्योग-धंधों के विस्तार तथा प्रसार का दायित्व इनको सुपुर्द किया गया।

पहली पंचवर्षीय योजना में मुख्य रूप से ग्रामीण तथा लघु-उद्योगों के विकास के लिए गाँववालों को ऋण की सुविधा प्रशिक्षण की सुविधा, तकनीकी परामर्श तथा आधुनिक यंत्रों को उपलब्ध करने को सुविधा तथा उत्पादन की बिक्री के लिए विक्रय-गृहों की स्थापना की सुविधा दी गयी। दूसरी योजना की अवधि में इन सहायताओं का विस्तार किया गया। दूसरी योजना में १२० करोड़ रुपये से कुछ ही कम देश भर में ग्रामीण तथा लघु उद्योगों के विस्तार पर व्यय किया गया जब कि पहली योजना में केवल ४३ करोड़ रुपये व्यय किये गये थे। दूसरी योजना की अवधि में अम्बर चर्खों के उत्पादन तथा वितरण पर भी बहुत ध्यान दिया गया। हथकरघों को बिजली द्वारा चलाने के लिए बुनकरों की सहकारी समितियों को भी गठित किया गया।

तीसरी योजना के दौरान में ग्रामीण तथा लघु उद्योगों का विकास निम्नलिखित आधार पर किया जा रहा है :—

१—ग्रामीण उद्योगों में लगे कार्यकर्ताओं की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए तथा उत्पादन के मूल्य को घटाने के लिए, उनकी कार्य-कुशलता को बढ़ाने के लिए तकनीकी परामर्श उपलब्ध करने तथा अच्छे औजारों को उपलब्ध करने तथा हर आवश्यक ऋण को भी दिलाने की व्यवस्था की गयी।

२—धीरे-धीरे आर्थिक सहायता को घटाने के लिए बिक्री पर छूट तथा संरक्षित बाजार की व्यवस्था की गयी।

३—ग्रामीण क्षेत्रों तथा छोटे नगरों में उद्योगों के प्रसार की कोशिश की गयी।

४—हस्तकलाओं तथा अन्य कलात्मक कार्यों में लगे लोगों को सहकारी संगठनों में लाने का प्रयास किया गया।

तीसरी योजना में औद्योगिक सहकारी समितियों की स्थापना पर अधिक बल दिया जा रहा है। विशेष रूप से हथकरघा-उद्योग तथा सिल्क-उद्योग के विकास के लिए मौजूदा सहकारी समितियों का विस्तार किया जा रहा है तथा कोशिश यह की जा रही है कि अधिक से अधिक लोग, जो इन उद्योगों में लगें, सहकारी संगठनों के माध्यम से काम करें।

तीसरी योजना में ग्रामीण तथा लघु उद्योगों के विस्तार पर लगभग २६४ करोड़ रुपये के व्यय की संभावना है। इस धनराशि

द्वारा ग्रामीण तथा लघु उद्योगों के विकास की कोशिश की जायगी। हैंडलूम के उत्पादन को बढ़ाने के साथ कोशिश यह की जायगी कि लोगों में अम्बर चर्खे का प्रयोग बढ़े। पारंपरिक चर्खे का प्रयोग तो उसी तरह होता रहेगा लेकिन फिर भी अम्बर चर्खे के प्रयोग पर अधिक बल दिया जायगा। गाँवों में धान कूटने की मशीनों, तैल घानी, चर्मशोधन, दियासलाई बनाने, गुड़-खाँड़सारी, मधुमक्खी पालन, पामगुड़, हाथ के बने कागज, साबुन बनाने आदि के उद्योगों के विकास के लिए भी ग्रामीणों को सहायता दी जायगी।

इतना ही नहीं, विकास क्षेत्रों में नियुक्त सहायक विकास अधिकारी उद्योग, अपने विकास क्षेत्र से सम्बन्धित गाँवों में चलनेवाले ग्रामीण उद्योगों के लिए जो विकास-क्षेत्र के पास सरकारी सहायता रहती हैं उसे गाँववालों को उपलब्ध करने में सहायता देंगे। इस सम्बन्ध में गाँववालों को भी कदम उठाना चाहिए। जिन गाँवों में जिस किसी उद्‌योग के लिए कच्चा माल हो, उनका पूरा-पूरा ग्रामीण उद्‌योगों के विकास के लिए प्रयोग होना आवश्यक है।

ग्रामीण उद्‌योगों के विकास के लिए पंचायतों को अपनी अलग योजना बनानी चाहिए। पंचायतों को गाँव के उपलब्ध आर्थिक और प्राकृतिक साधनों को देखते हुए ग्रामीण उद्‌योगों के विकास की कोशिश करनी चाहिए। सहकारी समितियों का गठन करके सरकार द्वारा दी जानेवाली आर्थिक सहायता से लाभ उठाकर ग्रामीण उद्‌योगों की सहायता से गाँवों को आत्मनिर्भर और सम्पन्न बनाने का प्रयास करना चहिए।

★

सामुदायिक विकास में शिक्षा और स्वास्थ्य

* ७ *

सामुदायिक विकास योजना का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य शिक्षा का प्रसार तथा गाँववालों के स्वास्थ्य की रक्षा तथा उनके स्वास्थ्य के विकास का भी है। शिक्षा के महत्त्व के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक नहीं है। क्योंकि देश के कोने-कोने में रहनेवाला भी शिक्षा के महत्त्व को जानता है। वैसे सैकड़ों वर्षों की दासता के कारण हमारे गाँव-गाँव तक शिक्षा की ज्योति नहीं पहुँच सकी। गाँव अशिक्षा के अंधकार में पड़े अपनी पुरानी रूढ़ियों तथा जड़ सिद्धांतों और बेबुनियाद आदर्शों के चक्कर में फँसकर प्रगति की राह में पिछड़ गये। दुनिया विज्ञान के युग से बढ़कर अणु-युग अणु-युग से भी दुनिया के लोग आगे निकलकर चन्द्रलोक की यात्रा की तैयारी करने लगे।

स्वतंत्रता पाने के बाद जल्दी से जल्दी गाँवों को भी आगे बढ़ाने की कोशिश शुरू हुई। गांवों में भी आधुनिक विज्ञान की पहुँच होने लगी। अब तो कोशिश यह हो रही है कि जैसे आर्थिक प्रगति के लिए सहकारी समिति, गाँवों का प्रशासन देखने के लिए हर गांव में ग्राम-पंचायत आवश्यक है उसी तरह गाँवों में शिक्षा के प्रसार के लिए पाठशाला भी बेहद आवश्यक है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि पिछले कुछ ही वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में हमारे देश तथा गाँवों में बहुत प्रगति हुई है। १९५१ से १९६१ की अवधि के बीच विद्यार्थियों की संख्या २३०·५ लाख से बढ़कर ४३०·५ लाख हो गयी। ६ से ११ वर्ष तक की अवस्था के स्कूल जाने वाले विद्यार्थियों की संख्या में ७९ प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा इसी प्रकार ११ वर्ष से १४ वर्ष की उम्र के विद्यालयों में जानेवाले विद्यार्थियों की संख्या में १०२ प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई। तीसरी योजना की अवधि में लगभग विद्यालयों में जानेवाले विद्यार्थियों की संख्या में २००·४ लाख की वृद्धि होगी।

देश में चलनेवाली दोनों योजनाओं में कुल स्कूलों की संख्या में ७३ प्रतिशत की वृद्धि हुई। प्रारंभिक स्कूलों संख्या में ६३ प्रतिशत, जूनियर स्कूलों की संख्या में १९१ प्रतिशत तथा उच्च माध्यमिक स्कूलों की संख्या में देशभर में १२८ प्रतिशत की वृद्धि हुई। तीसरी योजना का लक्ष्य है कि देशभर में ६ से ११ वर्ष की उम्र के बच्चे अवश्य ही स्कूलों में भेजे जायें। इसके लिए आंदोलन भी चलाया जा रहा है ताकि अभिभावकों का भी इस दिशा में पूरा-पूरा सहयोग मिल सके। तीसरी योजना में ७३००० प्रारंभिक पाटशालाओं, १८१०० माध्यमिक विद्यालयों तथा ५२०० उच्च माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना का लक्ष्य है। इतना ही नहीं, अध्यापकों के प्रशिक्षण की भी योजना में व्यवस्था है। ताकि विद्यार्थियों को शुरू

से ही अच्छी से अच्छी शिक्षा मिल सके। पूरे देश में शिक्षा के विकास के लिए पहली पंचवर्षीय योजना में १३३ करोड़, दूसरी पंचवर्षीय योजना में २०८ करोड़ खर्च किया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा प्रसार के कार्यक्रम पर ४१८ करोड़ रुपये व्यय होंगे जिनमें १० करोड़ रुपये सांस्कृतिक कार्यक्रमों पर व्यय होंगे।

इस प्रकार पूरे देश में शिक्षा के प्रसार का महान् प्रयास हो रहा है। सामुदायिक विकास योजना के माध्यम से गाँवों में भी शिक्षा के विस्तार पर बल दिया जा रहा है। गाँवों में नये खुलने वाले विद्यालयों के भवन-निर्माण के लिए विकास क्षेत्रों से सहायता मिलती है। गाँवों में स्कूल जानेवाले बच्चों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। गाँवों में छोटे-छोटे बच्चों के लिए बाल-बाड़ियों की भी स्थापना की जा रही है। बुनियादी शिक्षा द्वारा बच्चों की प्रवृत्ति को रचनात्मक दिशा देने का प्रयास किया जा रहा है।

इतना ही नहीं, गाँवों में सामुदायिक विकास योजना के जरिये प्रौढ़ों के प्रशिक्षण की भी योजनाएँ चलाई जा रही हैं। ताकि वे प्रौढ़ भी शिक्षित हों तथा शिक्षा द्वारा अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास कर सकें। हर विकास खंड में एक सहायक विकास अधिकारी शिक्षा, भी नियुक्त है। जिनका काम है उस विकास खंड में शिक्षा के प्रसार में हाथ बटाना। गाँवों में प्रौढ़ महिलाओं को शिक्षित करने, बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ाने की दिशा में भी सहायता

करने के लिए हर विकास क्षेत्र में एक सहायक विकास अधिकारी महिला राज्य की ओर से नियुक्त हैं जिनका काम है महिलाओं, बालिकाओं व बच्चों में शिक्षा के प्रसार का काम करना। इनकी सहायता के लिए ग्राम-सेविकाएँ भी नियुक्त की गयी हैं। इस प्रकार सामुदायिक विकास योजना के जरिये गाँवों-गाँवों में शिक्षा के प्रसार का भी प्रयास किया जा रहा है।

स्वास्थ्य

किसी भी देश के विकास, उसकी समृद्धि तथा उसकी ताक़त उस देश के निवासियों के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। कहा गया है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है। साथ ही अच्छे स्वास्थ्य बिना न कोई उत्पादन का काम हो सकता है, न शिक्षा का, न कोई भी अन्य काम। इसलिए हमारे देश की पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया गया। गाँवों में स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाओं के संचालन का भार भी सामुदायिक विकास योजना पर ही आया।

पूरे देश भर के लिए पहली पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य-योजनाओं पर लगभग १४० करोड़ रुपये तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में लगभग २२५ करोड़ रुपये व्यय किये गए। तीसरी पंचवर्षीय योजना में लगभग पूरे देश पर सब मिलाकर ३४२ करोड़ रुपये व्यय किये जायंगे।

गाँव गाँव में मलेरिया तथा अन्य संक्रामक रोगों के उन्मूलन का प्रयास किया गया। चेचक के उन्मूलन के लिए भी अभियान चलाये गये ताकि हर नागरिक चेचक का टीका लगवाये और चेचक के प्रकोप से होनेवाली हानि से अपने को बचा सके। तीसरी योजना के अंत तक देश के सभी गाँवों को पीने के लिए स्वच्छ पानी के भी उपलब्ध करने का लक्ष्य है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक देश के सभी विकास क्षेत्रों में प्रारंभिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना की गई। विकास क्षेत्रों में अस्पतालों व दवाखानों की संख्या जो १९५१ में ८६०० थी वह १९६१ में बढ़कर १२६०० हो गयी। तीसरी पंचवर्षीय योजना में विकास क्षेत्रों में २००० और अस्पतालों तथा दवाखानों की स्थापना का लक्ष्य है।

स्वास्थ्य के विकास के लिए अन्य महत्त्वपूर्ण योजना परिवार-नियोजन भी है। देश की आर्थिक स्थिति को देखते हुए यह भी आवश्यक हो गया कि परिवार नियोजित किया जाये। हर आदमी के परिवार में उतने ही बच्चे हों जिनका वह अच्छी तरह लालन-पालन कर सके तथा जिनकी उचित शिक्षा-दीक्षा की भी व्यवस्था वह कर सके।

इस उद्देश्य से विकास क्षेत्रों के माध्यम से गाँववालों की रुचि को परिवार को नियोजित करने की ओर खींचा जा रहा है। पहिली

पंचवर्षीय योजना में तो परिवार नियोजन के केवल २१ केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों में खोले गये। तथा १८६४ ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्रों पर भी परिवार नियोजन करने की सुविधाएँ उपलब्ध की गयीं। तीसरी योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में ६१०० दवाखाने स्थापित किये जायेंगे। सामुदायिक विकास योजना द्वारा परिवार नियोजन के कार्यक्रमों को संचालित करने में महत्त्वपूर्ण सहायता मिल रही है।

गाँवों के लोगों के जीवन-स्तर में परिवर्तन लाने के लिए गाँवों में नये घरों के निर्माण की भी योजना चलायी गयी। गाँवों की गृह-निर्माण योजना सामुदायिक विकास योजना की एक जिम्मेवारी हैं। घरों के निर्माण में काम आनेवाली विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन भी इसीलिए सहकारिता के जरिये किया जा रहा है। तथा १० गाँवों की एक इकाई चुनकर स्थानीय साधनों को ध्यान में रखते हुए आगामी ८ या १० वर्षों में गाँवों में नये खुले हवादार मकानों के निर्माण की भी योजना है। अधिक से अधिक २००० रुपये की लागत के मकानों के निर्माण के लिए ६६$\frac{2}{3}$ प्रतिशत ऋण देने की व्यवस्था की गयी है। राज्य सरकारों द्वारा नियत दर के अनुसार मौजूदा घरों के विकास के लिए भी ऋण दिया जा रहा है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में लगभग ३७०० गाँवों के सामाजिक और आर्थिक स्थिति का अध्ययन इस दृष्टि से किया गया। पूरे देश के लिए ३ करोड़ ६ लाख रुपयों की धन-राशि

लगभग १५४०० घरों के निर्माण के लिए मंजूर की गयी जिनमें ३००० घरों का निर्माण हो चुका है तथा बाकी का निर्माण चालू है। भूमि-विहीन गाँव के किसानों के लिए भी घरों के निर्माण के लिए लगभग ५ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी है।

गाँवों में अच्छे घरों को बनाने के लिए सड़कों को तथा पक्की गलियों को बनाने के लिए हर ग्राम-पंचायत को भी अपनी वार्षिक योजना बनानी चाहिए। साथ ही सहकारी संगठन के माध्यम से सरकारी सहायता लेकर गाँवों में अच्छे घरों को बनाना चाहिए। ताकि स्वच्छ और हवादार तथा नये ढंग के मकानों में गाँव के लोग रह सकें।

*

सामुदायिक विकास :
शांति और युद्ध में

* ८ *
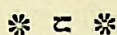
२० अक्तूबर १९६२ को अचानक हमारे देश की पवित्र सीमाओं पर चीन की बर्बर सेनाओं ने आक्रमण कर दिया। चीन की बर्बर सेनाओं का आक्रमण केवल हमारी हजारों मील भूमि को हड़पने की गरज से ही किया गया एक आक्रमण नहीं था बल्कि उनका हमला हमारे सोचने-विचारने के ढंग पर, हमारे पुश्तैनी विश्वासों पर तथा हमारी सभ्यता और संस्कृति पर किया गया एक हमला था।

मेरा ख्याल है कि चीन को हमारे देश की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति काँटे की तरह चुभती रही। उधर चीन की कृषि सम्बन्धी, उद्योग सम्बन्धी सभी नीतियाँ विफल हो रही थीं। चीन में अकाल के लक्षण थे। हो सकता है चीन अपनी नीतियों की विफलताओं तथा भारतीय नीतियों तथा भारत की आर्थिक और सामाजिक प्रगति से झल्ला कर हमारे देश पर आक्रमण कर बैठा हो। इतना ही नहीं, दूसरी ओर दुनिया के अन्य देशों में हमारा देश शांति का अग्रदूत हो रहा था। कहीं भी अगर लड़ाई की गुंजाइश होती थी तो वहाँ हमारे देश का यह संदेश अवश्य पहुंचता

था कि तीसरे युद्ध से तमाम मानव सभ्यता और संस्कृति का नाश हो जायेगा। क्योंकि अणुअस्त्रों के प्रयोग से तो आदमी ही दुनिया में शायद ही बचे। इस प्रकार हमारे देश की इज्जत और मर्यादा दुनिया के देशों में बढ़ती रही। तभी चीन के तानाशाहों ने हमारे देश की पवित्र सीमाओं पर आक्रमण कर निर्माण में लगी, प्रगति के राह पर आगे बढ़नेवाली शांतिप्रिय भारत की जनता पर जबर्दस्ती युद्ध लादने की साजिश की।

हो सकता है कि चीनी तानाशाहों की, इस आक्रमण के पीछे यह नीयत रही हो कि उनके इस बर्बर आघात से हमारे देश की योजनाएँ ठप हो जायेंगी तथा प्रगति रुक जायेगी।

लेकिन चीन के बर्बर आक्रमण के बाद ही पूरा देश समुद्र की तरह गरज उठा। गाँव-गाँव में एक बार फिर त्याग और बलिदान के गीत गूँजने लगे। महान् त्यागों और बलिदानों से पायी गयी आजादी की रक्षा के लिए पूरा देश अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हो गया। हमारे गाँवों में जोश और उत्साह की एक अपूर्व लहर दौड़ गयी। राष्ट्रीय सुरक्षा कोष गाँववालों के सोने, चाँदी तथा ग्रामीण महिलाओं के आभूषणों से भी भर गया।

पूरे देश की जनता ने निश्चय किया कि हम युद्ध भी करेंगे तथा योजना के काम को भी हर त्याग और बलिदान देकर आगे बढ़ायेंगे। खेत-कारखाने एक दूसरे मोर्चे के रूप में बदल गये। क्योंकि युद्ध के समय सेनाओं की आवश्यकताएँ बढ़ जाती हैं।

ऐसी स्थिति में सामुदायिक विकास योजना में भी इस युद्ध का मुकाबिला करने की तथा देश को विजयी बनाने की क्षमता लाने की दृष्टि से कुछ नयी योजनाएँ शुरू की गयीं।

२६ जनवरी १९६३ को हमारे स्व० प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने पूरे देश के लिए ग्राम स्वयंसेवक दल की योजना का उद्-घाटन किया। ग्रामीण स्वयंसेवक दल पर जो उत्तरदायित्व आये उनमें प्रमुख हैं :

१—ग्रामों की सुरक्षा के लिए चौकीदारी, रेल व तार की सुरक्षा, आदि की व्यवस्था करना।

२—राष्ट्रीय रक्षा के लिए सबसे आवश्यक कृषि उत्पादन की वृद्धि में सहायता करना। पैदावार बढ़ाने का एक देशव्यापी अभियान चलाकर अगले तीन वर्षों के निर्धारित लक्ष्य को एक या दो वर्षों में पूरा करना।

इस कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग सुरक्षा श्रम बैंक भी निर्मित किया गया। इसके द्वारा गांव के हर स्वस्थ नागरिक को हर महीने में कम से कम एक दिन के हिसाब से श्रमदान करना होगा या उस श्रम के बदले उसे मदद देना होगा।

३—ग्रामीण स्वयंसेवक दल को जनशिक्षा के प्रसार का भी काम सुपुर्द किया गया ताकि ग्रामीण जनता तक सही सूचनाएँ पहुँच

सकें। अफवाहों को रोका जा सके क्योंकि अफवाहों से बड़ा अहित होता है।

गाँवों में फैली जागरण और त्याग बलिदान और उत्साह की लहर को एक स्थायी रूप देने का इस प्रकार प्रयास किया गया। जनशक्ति के पूरे-पूरे उपयोग के लिए सुरक्षा श्रम बैंक की स्थापना भी भारतीय गाँवों के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना है।

अभी तक हमारे देश के गाँवों में श्रमदान का कार्य केवल स्कूलों के भवनों, सड़कों या पंचायतघरों के निर्माण के लिए होता रहा है। लेकिन सुरक्षा श्रम बैंक की स्थापना से अब श्रमदान कृषि-उत्पादन या कृषि के अन्य सहायक धन्धों के निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए भी किया जायेगा।

सुरक्षा श्रम बैंक गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के कर्तव्य पर जोर देता है और इसके जरिये उनके योगदान के लिए एक संस्थागत ढाँचा भी तैयार हो गया है। राष्ट्र की सुरक्षा और सम्पन्नता के लिए कृषि-उत्पादन पहिला आधार है। सुरक्षा श्रम बैंक देश के कृषि-उत्पादन को बढ़ाने के लिए करोड़ों गाँववालों की शक्ति का समुचित प्रयोग करेगा। इस बैंक का खाता ग्राम-पंचायतें अपने पास रखेंगी जिसमें कि ग्रामवासियों द्वारा किये गये श्रमदान का ब्यौरा होगा।

इस प्रकार राष्ट्रीय संकट के समय तथा युद्ध के समय सामुदायिक विकास संगठन और तेजी से निर्माण की दिशा की ओर मुड़ा। इतना ही नहीं, इन्हीं प्रयासों से सामुदायिक विकास योजना को भारत के गाँवों के रूप में आमूल परिवर्तन लाने में सफलता मिलेगी।

Samudayik Vikas
(A Book on Community Development)

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो० बॉक्स नं० ७०, पिशाचमोचन
वाराणसी–१

कवर-मुद्रक : विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि., मानमन्दिर, वाराणसी–१